सबला

वर्ष 9 : अंक 2 जागोरी, नई दिल्ली जून-जुलाई 1997

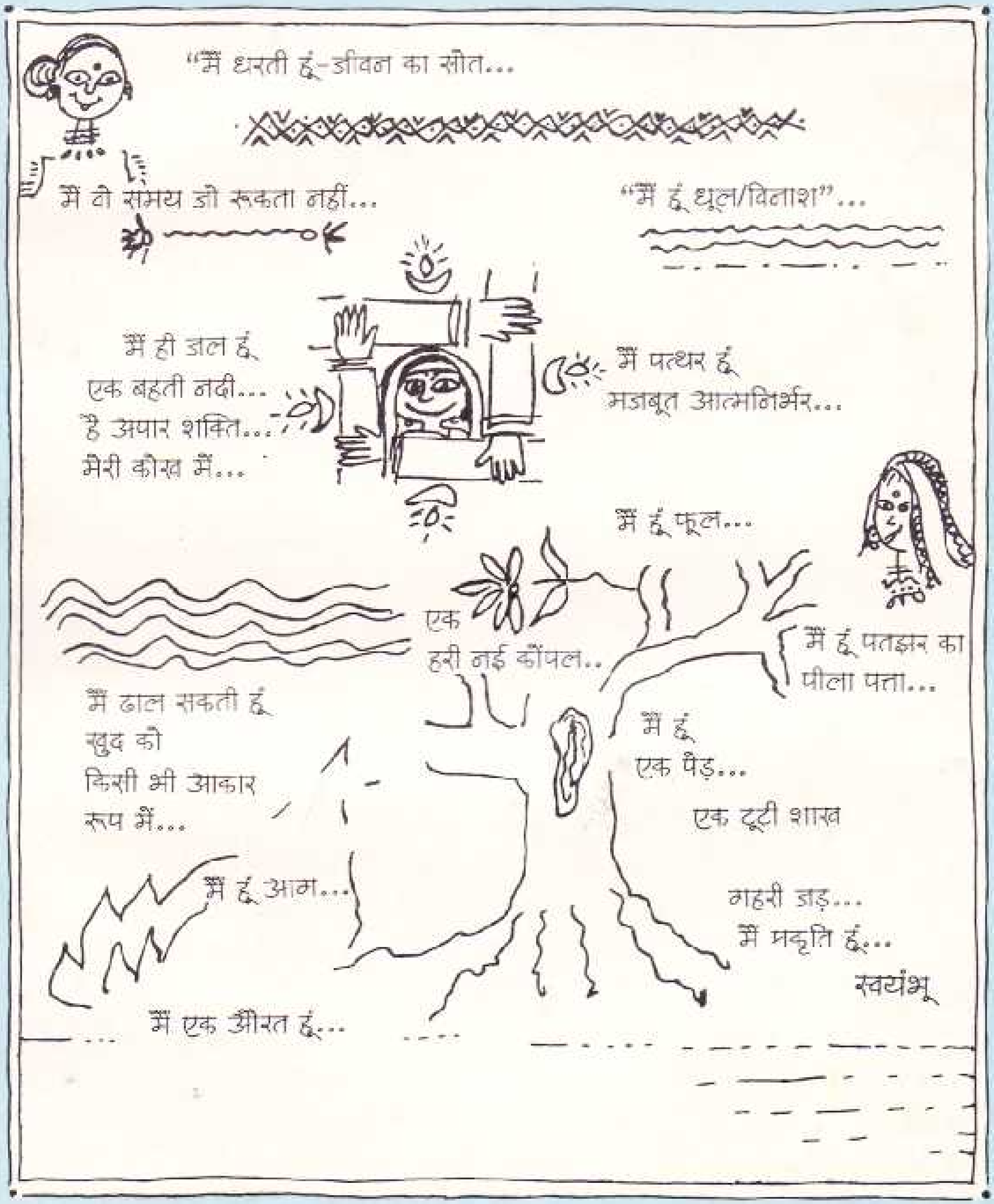
"मैं धरती हूं-जीवन का स्रोत...
मैं वो समय जो रुकता नहीं...
"मैं हूं धूल/विनाश"...
मैं ही जल हूं
एक बहती नदी...
है अपार शक्ति...
मेरी कोख में...
मैं पत्थर हूं
मजबूत आत्मनिर्भर...
मैं हूं फूल...
एक
हरी नई कौंपल..
मैं हूं पतझर का
पीला पत्ता...
मैं ढाल सकती हूं
खुद को
किसी भी आकार
रूप में...
मैं हूं
एक पेड़...
एक टूटी शाख
मैं हूं आग...
गहरी जड़...
मैं प्रकृति हूं...
स्वयंभू
मैं एक औरत हूं...

जागोरी
JAGORI

संपादक समूह
शारदा जैन
कमला भसीन
वीणा शिवपुरी
जुही जैन
गीता भारद्वाज
सुनीता ठाकुर

सहयोग
जागोरी समूह

चित्रांकन
मंजिमा (मुखपृष्ठ)
नीलम

प्रकाशन
गीता भारद्वाज, जागोरी

वितरण
प्रतिभा गुप्ता

ग्रामीण बहनों की द्विमासिक पत्रिका शिक्षा विभाग, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अनुदानप्रदत्त, सुश्री गीता भारद्वाज (जागोरी, सी-54 साउथ एक्सटेंशन-II, नई दिल्ली-110049) द्वारा प्रकाशित। वितरण कार्यालय, 1, दरियागंज, नई दिल्ली-110002। इन्द्रप्रस्थ प्रेस (सी.बी.टी.), 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 में मुद्रित।

अनुक्रम

हमारी बात —कमला भसीन 1

लेख

गीत गाती चलो —कमला भसीन 3
एक हक़ की लड़ाई —मणिमाला 7
अहिल्याबाई —वीणा शिवपुरी 9
पारिवारिक हिंसा एक और आयाम —सुहास कुमार 12
परदेश में बसी—सखी —जुही 14
तीजनबाई —सुनीता ठाकुर 16

कविता

धरती तुम्हारी —सीमा श्रीवास्तव 18
मां —सुनीता ठाकुर 18
परिचय —मणिमाला 19

कहानी

क्या औरत ही औरत की दुश्मन है? —कमला भसीन 20
लड़की होने का दुःख —तसलीमा नसरीन 23
हर गांव में हो पुस्तकालय... —जुही 24
बदलाव की हवा —वीणा शिवपुरी 25

रिपोर्ट

प्याऊ एक सफल लड़ाई —सीमा श्रीवास्तव 27

समीक्षा

किनारों पर उगती पहचान —वीणा शिवपुरी 28
बेटी का खत मां के नाम —जुही 29

क़ानून और अधिकार

पुराने अन्याय—नई परिभाषाएं —सीमा व शांति 31

स्वास्थ्य

एड्स के ख़तरों से घिरी औरत —आभा 33

हमारा पन्ना

तारामणि : एक विकलांग युवती की प्रेरणा कथा —बालमुकुन्द ओझा 35
चिड़िया और राजा 36

हमारी बात

नई सबला का दूसरा अंक आप तक पहुंचाने में खुशी हो रही है। जागोरी के लिये “सबला” प्रकाशन का काम नया है सो नये सिरे से सब सीखना पड़ रहा है। अभी क़दम सधे नहीं हैं, डगमगाते हैं। जब ज़्यादा परेशानी होती है तो शारदा जी के पास भागे जाते हैं। हमारी खुशक़िस्मती है कि शारदा जी हमेशा मदद करने को तैयार रहती हैं।

बीच में जब कुछ महीनों के लिये सबला निकलनी बन्द हो गई थी तब आप में से कई ने पूछा “क्या हुआ?” “क्यों हुआ?” कुछ ने कहा “सबला की कमी खलती है।” अब जब सबला दोबारा से मिलने लगी है तो लिखिये न ख़त, यह बताने को कि सबला कैसी लग रही है। सबला है या अभी ढीली है? क्या कमी नज़र आ रही है?

हमें आपके सुझावों और हौसला अफ़ज़ाई की बहुत ज़रूरत है। पत्रिका निकालने में मज़ा तभी है जब संवाद हो, पाठकों की तरफ़ से भी कुछ आये। निंदा आये, तारीफ़ आये, सुझाव आयें, पर कुछ आये। इकतरफ़ा बात से बात ही नहीं बनती। तो आपको न्योता है हमसे बतिआने का।

हमारा यह अंक दीवाली पर निकल रहा है सो जागोरी और संपादक मंडल की तरफ़ से आपको हार्दिक शुभकामनायें। आपके पारिवारिक जीवन में और हम सब के सामाजिक जीवन में प्रेम, सद्भावना, न्याय के दीप जलें। हम सब आशा का हाथ थामे रहें, और यह कहते हुए

इक न इक शम्मा इस अन्धेरे में जलाये रखिये
सुबह होने को है माहौल बनाये रखिये

कमला भसीन

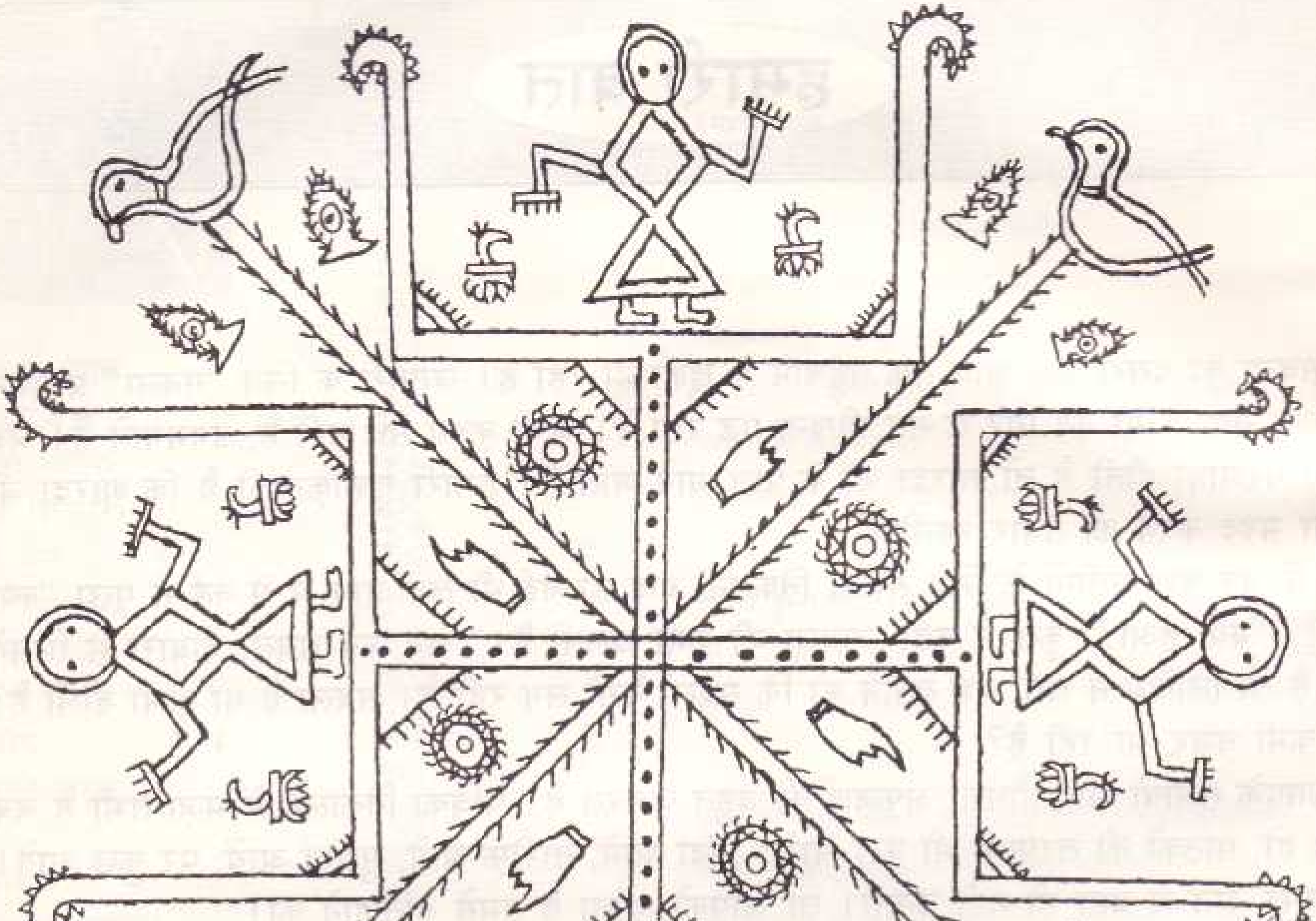

औरत चाहे तो सूई के नाके से गृहस्थी बना कर दिखा दे

गीत गाती चलो

(महिला आन्दोलन में गीत-संगीत)

कमला भसीन

'सबला' के पिछले अंक में महिला आंदोलनों में बहनों द्वारा रचे गए गीतों पर बात की गई थी। इन गीतों का महिला-जागृति एवं विकास में बहुत योगदान है। ये गीत औरतों के दुख दर्द, खुशी, उल्लास, संघर्ष, लड़ाई, गुस्सा हर भावना को दर्शाते हैं।

हमने बहुत सारे गीत बैठकों, कार्यशालाओं प्रदर्शनों, महिला दिवस मोर्चों तथा अन्य सामाजिक अवसरों पर गाए हैं। सेवा, लखनऊ की औरतें तीन चार प्रेरक गीत गाने के बाद ही अपना रोज़ का काम शुरू करती हैं। उन्हें लगता है, इससे वे बेहतर काम कर पाती हैं।

बिहार में स्कूलों की एक निरीक्षिका ने सरकार द्वारा चलाये जाने वाले लड़कियों के लगभग एक हजार स्कूलों में हमारा एक गीत (इरादे कर बुलंद तू जीना शुरू करती तो अच्छा था) सुबह की प्रार्थना की तौर पर गवाना शुरू किया। सुबह-सुबह धार्मिक गीत गाने की जगह हज़ारों लड़कियां नारीवादी गीत गाती हैं। उत्तरप्रदेश में महिला सशक्तता के एक कार्यक्रम ने अपने अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों में एक गीत (मिलकर हम नाचेंगे गाएंगे) अपनाया है। इसे वहां बच्चे भी गाना खूब पसन्द करते हैं। हमारे कुछ गीतों का प्रयोग पोस्टरों में भी किया गया है। पांच छः गीतों पर लघु फिल्में और टेलीविजन के लिए 'स्पौट्स' भी बनाए गए हैं। कई गीत महिला पत्रिकाओं, समाचार पत्रों और नवसाक्षरों के लिए पुस्तकों में भी इस्तेमाल हुए हैं।

गानों के ज़रिए हमारी चुप्पी और मन के बंधन टूटने में मदद मिली है। हममें से कुछ अपने दुखों के बारे में बात करने की जगह गीत गाने में सरलता महसूस करती हैं। ज्यों-ज्यों हमारा आत्मविश्वास बढ़ा है और हमने सामुदायिक्ता की भावना विकसित की है, हम खुली हैं। हमने अपने दुख-सुख, सपने, तमन्नाएं आपस में बांटे हैं।

जब धुनें तेज़ हों और शब्द उमंग भरे तो औरतों के लिए अपने मन और शरीर को नाचने से रोक पाना कठिन होता है। इसलिए कई बार गीतों की महफ़िल नाच में बदल जाती है और हम सब एक नई ऊर्जा, अपनापन और जुड़ाव महसूस करती हैं। गीत हमारी कार्यशालाओं में संजीवनी बूटी का काम करते हैं जहां आमतौर पर चर्चा के मुद्दे गंभीर, जटिल और तकलीफ़देह होते हैं। कार्यशाला के दौरान नाच गाने का एक दौर अचानक हुई बरसात की तरह होता है जिससे कुछ देर के लिए गंभीरता और दर्द की धूल साफ़ हो जाती है। नाच और गाने की छुट्टी, चाय-कॉफ़ी की छुट्टी से ज़्यादा ताकत और ताज़गी दे जाती है। वास्तव में जो लोग दूर से हमारी इन कार्यशालाओं को देखते

हैं और हर बार कुछ घंटों बाद हमें गाते नाचते पाते हैं, उन्हें विश्वास नहीं होता कि इन बैठकों व कार्य-शालाओं में हम कुछ गंभीर काम भी करती हैं। हम यह मानती हैं कि काम और मज़ा, सीखना और आनन्द साथ-साथ संभव ही नहीं है, जब्कि यह होना ही चाहिए।

गीतों के माध्यम से जुड़ाव

मुझे लगता है, गीत गाना ही सिर्फ़ एक ऐसा माध्यम है जिसके साथ अन्य लोग तुरन्त जुड़ जाते हैं, जहां कई आवाज़ें एक होकर ताक़तवर बन जाती हैं, जिससे हर एक सशक्त महसूस करता है और सामुदायिकता की भावना पैदा होती है। बुद्धि और भावना जुड़ जाती हैं, शरीर और मस्तिष्क जुड़ जाता है, मस्ती और गंभीरता जुड़ जाती है। संगीत, भाषा की दीवारों से ऊपर उठ पाता है। जब आप गाते हैं तो कोई ऊंचा-नीचा नहीं रहता, खासतौर पर जब मैं गाती हूं क्योंकि, मैं बहुत अच्छी गायिका नहीं हूं। हर समूह में कुछ अच्छा गाने और बेहतर नाचने वाली होती हैं जो बागडोर संभाल लेती हैं। गाने वालों और न गाने वालों के बीच, साक्षरों व निरक्षरों के बीच भेद नहीं रहता। अचानक नई नेता उभर आती हैं। वे जो चर्चाओं के दौरान चुप थीं, नाचने और गाने का हुनुर दिखाने लगती हैं। प्रायः औरतें नए गीत बनाने लगती हैं। उनकी रचनात्मकता सारे बंधन तोड़कर बह निकलती है।

गीत लिखने और गाने के द्वारा हमें इतिहास में अपनी नारीवादी जड़ें ढूंढने में भी मदद मिली है। जब हमने लोकगीतों तथा पिछली अनेक सदियों में महिला सन्तों द्वारा लिखे गए गीतों को देखना शुरू किया तो उनमें हमें हमारी नारीवादी विरासत मिली क्योंकि हमने देखा कि किस तरह हमारी पुरखिनों ने पितृसत्तात्मक बंधनों को तोड़ा था; अपनी रचनात्मकता की अभिव्यक्ति के लिए मौजूदा आज़ाद जगहों का खूबसूरत इस्तेमाल किया था; अपने गुस्से, घुटन, इच्छाओं और सपनों को शब्दों का जामा पहनाया था।

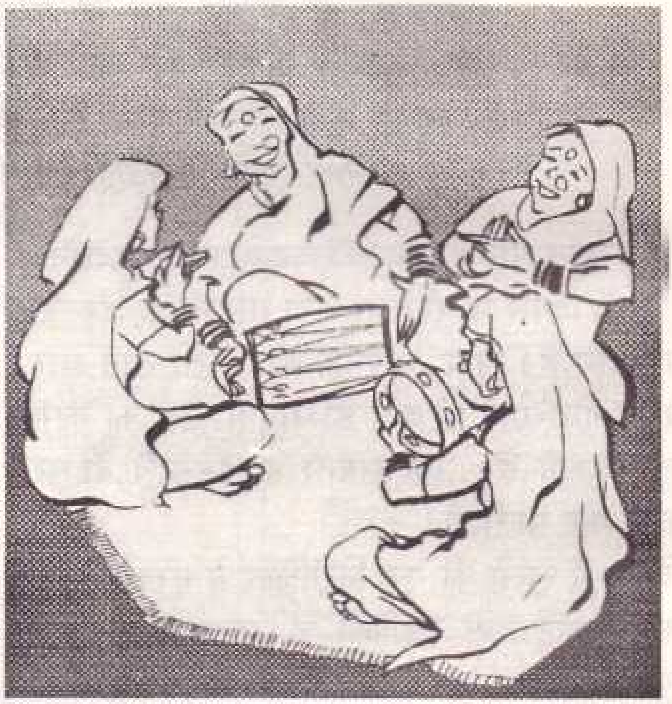

लोकगीतों में औरतों का विरोध तथा अपनी ज़िंदगी इज़्ज़त से जीने की इच्छा खूब दिखाई देती है। अपनी पुरखिनों से इस जुड़ाव के जरिए हमें नई ताकत मिली है और हमारे वर्तमान नारीवाद को लम्बी, गहरी, मज़बूत जड़ें मिली हैं।

गीतों की क्रांतिकारी सम्भावनाएं

चूंकि गीत लोगों के दिल और दिमाग में रहते हैं उन्हें जब्त करना, जलाना या रोक लगाना संभव नहीं है। हवा की तरह वे कहीं भी पहुंच कर गुनगुना सकते हैं। पाकिस्तान में राष्ट्रपति ज़ियाउलहक़ के समय में जब किसी भी तरह की राजनैतिक कार्रवाई या अभिव्यक्ति के लिए जगह

नहीं थी लोगों ने अपना विरोध जताने के लिए गीतों का सहारा लिया। फ़ैज़ अहमद 'फ़ैज़' की क्रांतिकारी कविताएं तथा बुल्लेशाह व शाह हुसैन जैसे सूफ़ी सन्तों के गीत गाना राजनैतिक विरोध का सबसे असरदार तरीका बन गया था। चूंकि राजनैतिक प्रदर्शनों व बैठकों की इजाज़त नहीं थी, पाकिस्तान के विमैन्स ऐक्शन फ़ोरम ने औरतों के मेले लगाए, बाहरी तौर पर जिनका मक़सद मनोरंजन खाना-पीना और खरीदारी था। अधिकारियों ने ऐसे मेले लगाने की इजाज़त बिना यह जाने दे दी कि राजनैतिक नाटक और गीत इन मेलों की ख़ासियत थे। स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान राष्ट्रीय नेता अदालतों, पुलिस थानों आदि में गीत गाने लगते थे। इस प्रकार के गीत लोगों को प्रेरित करते हुए जंगल की आग की तरह फैल गए थे।

लोकगीतों में औरतों का विरोध तथा अपनी ज़िंदगी इज़्ज़त से जीने की इच्छा खूब दिखाई देती है। अपनी पुरखिनों से इस जुड़ाव के जरिए हमें नई ताक़त मिली है और हमारे वर्तमान नारीवाद को लम्बी, गहरी, मज़बूत जड़ें मिली हैं।

"सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए कातिल में है"

आज हम अपने इन गीतों को बड़े शानदार, ऊंची सुरक्षा वाले सम्मेलनों में ले जाती हैं ताकि वातावरण अनौपचारिक हो सके, चर्चाओं में भावना पैदा हो सके तथा अनुत्पादक गंभीरता और पदानुक्रम टूटे। मुझे याद है हमने ऐसी कई भय पैदा करने वाली जगहों पर, जहां प्रधानमंत्री व अन्य मंत्री और अधिकारी मौजूद थे, गाया था। सिर्फ़ औरतें ही ऐसे काम करने की हिम्मत कर सकती हैं और बच भी सकती हैं।

हम सबमें एक मीरा है

हमारे गीतों के शब्द हालांकि बड़े लोकप्रिय हैं, परन्तु कोई साहित्यिक नहीं हैं। जाने माने कवि और गीतकार कहीं अधिक अच्छा लिखते हैं। हमारे कैसेटों में गायकी भी बहुत ऊंचे दर्जे की नहीं है, क्योंकि हम पेशेवर और प्रशिक्षित गायकों का इस्तेमाल भी नहीं करते। हमारी गुणवत्ता में नुक्स ढूंढे जा सकते हैं, परन्तु हम नहीं चाहते कि रचनात्मकता पर सिर्फ़ विशेषज्ञों का एकाधिकार हो। हमारा मानना है कि हर एक गा सकता है, नाच सकता है। कई लोग गीत लिख सकते हैं और उन्हें ऐसा करने के लिए उत्साहित करना चाहिए। सिर्फ़ सर्वोत्तम का इस्तेमाल करने से बाकी झिझक जाएंगे।

उसी प्रकार से अगर गीत झरने की तरह हमारे दिलों से फूट पड़ते हैं तो कौन कह सकता है कि उन्हें रोक दो, क्योंकि मीरा बाई या दूसरे कवि बेहतर लिख सकते हैं। मीरा बाई ने ज़रूर बड़े सुन्दर गीत लिखे हैं, परन्तु हम सबके भीतर जो एक मीरा है उसका क्या? हमारी रचनात्मकता का क्या होगा? जैसे मैंने गीत लिखने शुरू किए वैसे ही आन्दोलन में अनेक लोगों ने किया है। अत्यधिक रचनात्मकता नदी की तरह बह निकली है, जिसने हमें आत्म सम्मान और आत्म विश्वास दिया है। हमारी रचनाएं दूसरों की तुलना में सबसे अच्छी ना हों, परन्तु वे हमारी सबसे अच्छी रचनाएं हैं और वही महत्वपूर्ण हैं। मैं सोचती हूं कि यह बहुत ही बढ़िया बात है कि महिला आन्दोलन ने हमें रचनात्मक होने का मौक़ा और जगह दी है। अलग अलग रंगों, रूपों और खुशबुओं के फूल खिलें, फलें, फूलें।

(क्रमश: पृष्ठ 25 पर)

गीत गाती चलो (पृष्ठ 5 का शेष भाग)

मौखिक परम्पराओं पर आधारित माध्यमों को सशक्त करने की ज़रूरत

मुझे लगता है कि लोगों के साथ सच्ची सहभागिता बनाने के लिए, जन संघर्षों में भाग लेने और उसे समर्थन देने के लिए, औरतों की रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने के लिए, आमने सामने के सम्पर्क तथा जन माध्यमों के अलावा और कोई विकल्प नहीं है। मेरा विश्वास है कि विकेन्द्रीकृत नागरिक समुदाय बनाना, तथा ऐसी जीवनचर्या अपनाना जो निरन्तर चल सके, बहुत आवश्यक है तथा इस स्तर पर आमने सामने का मौखिक सम्पर्क ही सबसे अधिक असरदार होता है। अतः हमें मौखिक परम्परा पर आधारित, कम कीमती व कम तकनीकी माध्यमों से सीखना चाहिए और उन्हें मज़बूत करने का अर्थ होगा कि हम अतीत की नींव पर रचना करेंगे, लोगों के हुनर व जानकारी से सीखेंगे, उसे समर्थन देंगे, समानतापूर्ण सम्बन्ध व वार्तालाप शुरू करेंगे और अपनी ज़मीन से जुड़े रहेंगे। मौखिक परम्पराओं के साथ काम करने से यह भी सुनिश्चित होगा कि हम 'निरक्षरों' को दरकिनार नहीं करेंगे। 'माध्यम निर्माता' 'माध्यम उपभोक्ता' से अलग नहीं होंगे हमारे संदेश मुनाफ़ा कमाने का साधन नहीं बनेंगे। □

(अनुवाद : वीणा शिवपुरी)

नोट : 'सबला के पिछले अंक में इस लेख के साथ प्रकाशित—चलो आओ बहनों... पंक्तियां विभूति पटेल के इसी शीर्षक के गीत से ली गई थीं।'

छठा
नारी मुक्ति
संघर्ष
सम्मेलन

एक बार फिर, देश के विभिन्न राज्यों में महिला संगठनों और आंदोलनों से जुड़ी हम सब औरतें, छठे नारी मुक्ति संघर्ष सम्मेलन के लिए रांची में 28-30 दिसंबर 1997 को इकट्ठी होने जा रही हैं। हमारी उम्मीद है कि सम्मेलन में हम अपने अनुभव, समझ, नजरिये, संघर्ष और अभियान एक दूसरे के साथ बांटेंगे। हम साथ जुड़कर अपनी उम्मीदों और अपने सपनों के बारे में और रणनीतियों पर बातचीत करेंगे। अन्य जन आंदोलनों और संघर्षो से भी जुड़ेंगे। अलग-अलग विषयों पर हम चर्चा करेंगे। हम एक साथ आने के इस उत्सव को मनाएंगे।

हर दो-तीन साल में होने वाले ये सम्मेलन भारत के महिला आंदोलन की एक परंपरा से बन गए हैं।

देशव्यापी बलात्कार विरोधी अभियान के संदर्भ में 1980 में पहला सम्मेलन बंबई में हुआ था।

दूसरा सम्मेलन फिर बंबई में ही हुआ 1985 में।

और तीसरा सम्मेलन औरतों की भागीदारी बढ़ाने के लिए पटना में 1988 में आयोजित किया गया।

चौथा सम्मेलन 1990 में कालिकट में।

पांचवां सम्मेलन 1994 में तिरुपति में हुआ।

अब छठे सम्मेलन के लिए तीन मुद्दों पर खास जोर देने का निर्णय लिया हैं:

औरतों का विस्थापन

तमाम विकास नीतियों और अब नई आर्थिक नीति के तहत् हजारों की तादाद में लोग विस्थापित होते रहे हैं। इसका सबसे बुरा असर औरतों पर होता है। अपनी जमीन, काम, कमाई के जरिये और संस्कृति सभी से वे टूट रही हैं। औरतें पहले ही घर-परिवार, में हाशिए पर पहुंची हुई हैं। अब वे इन नीतियों को दोहरी मार सह रही हैं।

औरतों के खिलाफ बढ़ती हुई हिंसा

हम सब हिंसा के खिलाफ लगातार संघर्ष कर रहे हैं। फिर भी औरतों पर होती हिंसा आए दिन बढ़ती जा रही है। पति व रिश्तेदारों द्वारा बलात्कार और काम स्थल पर छेड़-छाड़ और यौनिक हिंसा के मसले भी आंदोलन के मुद्दे बन रहे हैं। औरतों पर होती इस हिंसा के खिलाफ हम कौन सी रणनीति अपनाना चाहते हैं इस पर चर्चा करना बहुत जरूरी है।

राजसत्ता का स्त्री विरोधी चरित्र

सरकार ने औरतों के लिए कई कानून और नीतियां समय-समय पर बनाई हैं, लेकिन वह नीतियों को लागू करने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाती। सरकार का पृसित्तात्मक जातिवादी व वर्गीय चरित्र उसके हर कार्यक्रम, नीति, और योजना में नजर आता है। सेना और पुलिस जैसी राजसत्ता की शाखाओं से औरतों पर की जाने वाली हिंसा तक की रोकथाम नहीं हो पाती।

इन तीन मुख्य मुद्दों के अलावा स्वास्थ्य, परिवार व मददगार ढांचे, सांप्रदायिकता,जेन्डर न्याय आधारित कानून, यौनिकता, प्राकृतिक संसाधन, नारी आंदोलन में उभरते विभिन्न नज़रिये, औरतें व काम, आदिवासी औरतें, दलित औरतें व मुस्लिम औरतों की खास समस्याओं पर भी अलग से बातचीत होगी। इन सब विषयों पर कार्यशालायें और चर्चाओं के साथ-साथ होगें हमारे अपनी बात कहने-सुनने के माध्यम-कविता, गाने नाटक, पोस्टर, फिल्म इत्यादि।

सभी महिलाओं को सम्मेलन में शामिल होने के लिए हम आमंत्रित कर रहे हैं। इस सम्मेलन में आने का, इसमें जुड़कर अपने तरीके से अपनी बात कहने का, एक दूसरे की सुनने-सुनाने का, अपनी सृजनात्मकता व अनुभव बांटने का, आप सभी औरतों का और औरतों के संगठनों का आह्वान करते है। ☐

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:
राज्य समन्वय समिति
नारी मुक्ति संघर्ष सम्मेलन, स्वर्गीय एस.के. बनर्जी का मकान,
वुमेन्स कालेज लेन, नागरा टोली, रांची-834001,
बिहार, फोन-207741/301963

एक हक़ की लड़ाई

मणिमाला

औरतों को घर परिवार के अन्दर तो बहुत कुछ झेलना ही पड़ता है, लेकिन जब वे घर से बाहर निकलती हैं तब भी कम नहीं झेलना पड़ता। अब उन्होंने चुप न रहकर अन्याय के खिलाफ़ संघर्ष करने का फैसला किया है। सहारनपुर की बहनों ने हाल ही में लाठी गाली का सामना करके ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया है।

इसी साल जून माह की बात है। एक जगह गुड्डे-गुड्डियों का खेल चल रहा था। उसी दौरान थाना मंडी के इंस्पेक्टर विनोद शर्मा की झड़प देवबंद नगर-पालिका की अध्यक्ष जीनत नाज़ से हो गई। बात बात तक नहीं रही, बहस और फिर झड़प में बदल गई। तर्क से थकने लगे तो इंस्पेक्टर ने अपने मर्दानापन के इस्तेमाल की बात सोची। नाज़ के साथ अश्लील व्यवहार किया। औरत होने की गालियां दीं।

इस घटना का विरोध होना ही चाहिए था, हुआ भी। नाज़ धरने पर बैठ गई। उनकी मांग थी कि इंस्पेक्टर को निलंबित किया जाये। यह सवाल सिर्फ़ नाज़ का तो था नहीं, हर ग़ैरतमन्द औरत का था। पालिका के कुछ सभासदों, सामाजिक संगठनों ने उनका साथ दिया। इलाके के महिला संगठनों ने ख़ास भूमिका निभाई। उनके शामिल होने से यह मसला किसी व्यक्ति का न रहकर समाज का बन गया। विरोध भी आन्दोलन बन गया।

सारे संगठनों ने मिलजुलकर आन्दोलन को आगे बढ़ाने का फ़ैसला किया। घोषणा की कि 25 जून 1997 को घंटाघर पर चक्का जाम किया जायेगा और रेलें रोकी जायेंगी। इस दौरान पुलिस ने 21 लोगों को गिरफ्तार किया, पर आन्दोलन थमा नहीं, बढ़ता ही गया।

आन्दोलन के दबाव में थाना इंस्पेक्टर का तबादला कर दिया गया, पर तबादला कोई हल नहीं था। जगह बदल जाने से क्या कुछ बदल जायेगा? नाज़ के साथ बदतमीज़ी हो या किसी और के साथ, क्या फ़र्क पड़ता है... और इसी सोच के साथ आन्दोलन जारी रहा।

अपनी घोषणा के मुताबिक महिलाओं ने घंटाघर पर खड़ी होकर वहां से निकलने वाले पांच रास्ते जाम कर दिये। मानव श्रृंखला बनाई और नारेबाजी भी की। पुलिस वाले इससे बहुत ही नाराज़ हो गये। पहले बहला-फुसला कर हटाने की कोशिश

कर रहे थे। उससे वे नहीं हटी तो धमकियां दी गईं। धमकियां भी उन्हें हटाने में सफल नहीं रहीं तो पुलिस ने अपनी लाठी का इस्तेमाल किया। अंधाधुंध लाठियां बरसाई गईं उन औरतों पर। उनका कसूर सिर्फ़ इतना था कि वे पुलिस इंस्पेक्टर द्वारा किये गये अभद्र व्यवहार का विरोध कर रही थीं।

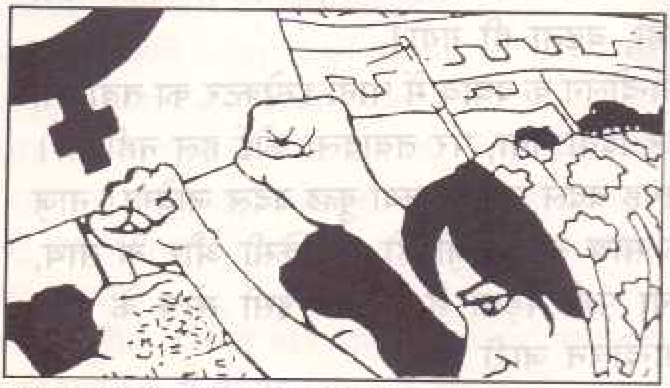

सभार वीमेन इनवीजन जुलाई 97

लाठी-चार्ज के दौरान आन्दोलनकारियों को खूब चोट आई। कई तो घायल होकर गिर पड़ीं। फिर भी विरोध के स्वर थमे नहीं। जो नहीं गिरी वे खड़ी रहीं। प्रदर्शन करती रहीं। नारे लगाती रहीं। उन्हें वहां से हटाने के लिए पुलिस ने बाल पकड़कर उन्हें घसीटा। जबरन गाड़ी में बिठाया और पुलिस स्टेशन ले गये।

कइयों की हालत इतनी खराब हो गई थी कि उन्हें पुलिस थाने के बजाय अस्पताल ले जाना पड़ा। उन पर पुलिस को उकसाने का, बलवा करवाने का, इलाके की शांति भंग करने इत्यादि कई उल्टे सीधे आरोप लगाये गये पुलिस ने इन सबको अपनी हिरासत में ले लिया। जेल ले गये। फिलहाल तो वे जमानत पर छूट गयी हैं, पर उन्होंने आगे भी लड़ते रहने का फैसला किया है। पुलिस ने इन्हीं आरोपों के आधार पर उन्हें तंग करने का इरादा बना रखा है। लगता है यह लड़ाई लम्बी चलेगी।

वैसे अक्सर ऐसा होता नहीं है। अगर किसी कामकाजी महिला पर कोई आपत्ति आती है, कोई अत्याचार होता है तो हम यह सोचते हैं कि उसका व्यक्तिगत मामला है। इसी तरह अगर किसी कार्यकर्त्ता पर कोई हमला होता है तो कामकाजी महिलाएं सोचती हैं कोई बवाल किया होगा। घर के अन्दर महिलाओं पर कोई अत्याचार होता है तो हम सोचने लगते हैं कि घरेलू माहौल में एडजस्ट करना नहीं आया होगा। पर यह अपने आप में उम्मीद जगाने वाली एक घटना है जहां सारे लोगों ने मिल बैठ कर इस घटना का विश्लेषण किया। सामाजिक संदर्भ में इसे समझने की कोशिश की और औरत की गरिमा पर आंच न आने देने का फैसला किया। इस लड़ाई का एक खूबसूरत पहलू यह भी है कि इसमें अच्छी तादाद में मर्द भी शामिल हुए।

जीत हार तो लगी ही रहती है। लाठी गोली भी चलती ही रहती है। लड़ेंगे तो मार पड़ेगी। लड़ेंगे तो हारेंगे भी। तो क्या लड़ें ही नहीं? यह तो नहीं हो सकता। सो, लड़ाई ज़ारी है। □

खूब से सवालात करने आज हम सब आए हैं,
सारे अंधियारों को हरने आज हम सब आए हैं।

अहिल्याबाई

वीणा शिवपुरी

चौंडी एक छोटा-सा गांव महाराष्ट्र प्रदेश के औरंगाबाद ज़िले में। इस गांव के पटेल थे मानकोजी शिंदे। सन् 1725 में मानको जी की पत्नी सुशीला बाई ने एक बेटी को जन्म दिया। उसका नाम रखा गया अहिल्याबाई। बचपन से ही वह बड़ी सुशील और धार्मिक प्रवृत्ति की थीं। घर पर ही पिता ने उसे थोड़ा बहुत लिखना-पढ़ना सिखाया।

एक दिन (जब वह नौ साल की थीं) हमेशा की तरह शाम को आरती के समय शिव मंदिर गई। वहां संयोग से मालवा प्रदेश के सूबेदार मल्हार राव होल्कर भी मौजूद थे। उन्होंने इस बच्ची को देखा और उसके चेहरे की शांति और तेज से बड़े प्रभावित हुए। उन्हें अहिल्या के व्यक्तित्व में बड़े गुण नज़र आए। उनके मन में इस बच्ची को अपनी बहू बनाने का विचार आया।

> अहिल्याबाई का जीवन चरित्र आज की कर्मठ औरतों के लिए भी उतना ही आदर्श है जितना दो सदी पहले था। उनका जीवन 'सादा जीवन उच्च विचार' का प्रतीक था।

मल्हार राव खुद बहुत बुद्धिमान और प्रतापी शासक थे, परन्तु उनका इकलौता बेटा खांडो जी लाड़-प्यार में बिगड़ गया था। वे एक ऐसी बहू की तलाश में थे जो उनके भटके हुए बेटे को सही रास्ते पर ले आए। अहिल्याबाई को देख कर उनकी तलाश पूरी हो गई। बड़ी धूमधाम से अहिल्याबाई का विवाह हुआ।

पत्नी अहिल्या

ससुराल में अहिल्याबाई ने अपने अच्छे व्यवहार और मधुर वाणी से सबका दिल जीत लिया। अहिल्याबाई का पति खांडेराव क्रोधी, हठी और विलासी था। शीघ्र ही वह अपने पति के स्वभाव को पहचान गईं। उन्होंने धीरे-धीरे अपने पति का दिल भी जीत लिया। इस तरह से खांडेराव में भी परिवर्तन आने लगा। वह राज काज की ओर ध्यान देने लगा। वह अब शस्त्र-कला का अभ्यास करता। युद्धों में भाग लेता। इस परिवर्तन से अहिल्याबाई के सास-ससुर बहुत प्रसन्न हुए।

मल्हार राव होल्कर पूना के पेशवा का प्रमुख सेनापति और मालवा प्रदेश का सूबेदार था। उन्हें अपनी सेना लेकर इधर-उधर कर वसूलने और युद्ध करने जाना पड़ता था। पीछे से उनकी बुद्धिमति पत्नी गौतमा बाई राजकाज संभालती थीं। अपनी सास के साथ अहिल्या बाई ने सिर्फ राज काज ही नहीं युद्ध कार्य भी सीखा। वे अस्त्र-शस्त्र चलाने में भी माहिर हो गईं। कई बार मल्हार राव उन्हें लड़ाइयों में अपने साथ ले जाते थे। उन्हें अपने बेटे से ज़्यादा बहू की योग्यता पर भरोसा था।

समय बीतता रहा। होल्कर परिवार की सुख-समृद्धि दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ती जा रही थी। अहिल्या बाई के घर एक पुत्र जन्मा जिसका नाम रखा गया मालेराव। दो वर्ष बाद एक बेटी मुक्ताबाई पैदा हुई। उनका घर-आंगन खुशियों से भर गया।

एक बार मल्हार राव भरतपुर के राजा सूरजमल

जाट से कर वसूलने गए। उन्होंने मराठा सेनापति को कर देने से इन्कार कर दिया। कुंभेर के किले पर युद्ध शुरू हुआ। मल्हार राव और खांडेराव युद्ध का संचालन कर रहे थे। अहिल्याबाई भी सेना के लिए रसद, गोला बारूद की देखभाल कर रही थीं। एकाएक कुंभेर की ओर से छोड़ा गया तोप का गोला गिरा और खांडेराव की मृत्यु हो गई। मल्हार राव और अहिल्याबाई पर तो आसमान टूट पड़ा। युद्ध रुक गया। अठारहवीं शताब्दी के भारत में सती-प्रथा प्रचलित थी। अहिल्याबाई ने सती होने का निर्णय लिया। यह सूचना मल्हार राव पर गाज की तरह गिरी। उन्होंने रो-रोकर अहिल्याबाई से कहा– "अब तू ही मेरा बेटा है। तेरे भरोसे मैं जी लूंगा। अहिल्या तू हम सबको अनाथ करके मत जा।"

अहिल्याबाई ने शांत मन से विचार किया। अगर वह सती हो जाएगी तो समाज में उसे आदर मिलेगा, लेकिन पूरा राज्य तहस-नहस हो जाएगा। उसकी जनता की देखभाल करने वाला कोई न रहेगा। यही सब सोचकर उसने सती होने का फ़ैसला बदल दिया।

अब अहिल्याबाई ने सारे राजसी सुख त्याग दिए। उनके जीवन का उद्देश्य जनता की सुख सुविधा का ध्यान रखना बन गया। मल्हार राव अब भी युद्धों में व्यस्त रहते थे। अहिल्या उनके पीछे पूरा राज काज संभालती थीं। वे अपने नाम से दूर-दूर के राज्यों से पत्र व्यवहार करती थीं। उनकी कार्य कुशलता की चर्चा दूर-दूर तक होने लगी थी। उन्होंने तीर्थ यात्राओं और युद्धों के ज़रिए बहुत दूर-दूर तक भ्रमण किया था। जहां की पूरी जानकारी उन्हें थी।

मुश्किलों का दौर

पति की मृत्यु का घाव तो भरा नहीं था कि कुछ वर्षों बाद उनके पिता समान ससुर मल्हार राव का भी स्वर्गवास हो गया। दादा की मृत्यु के बाद पोता मालेराव गद्दी पर बैठा, लेकिन वह एक कम उम्र और अयोग्य व्यक्ति था। वास्तव में अब अहिल्याबाई अपने सेनापति तुकोजी के सहयोग से राजकाज चलाती थीं। अहिल्याबाई ने अपने बेटे को सही राह पर लाने की बहुत कोशिशें की। मालेराव सुधरा तो नहीं, लेकिन बाईस साल की उम्र में ही बीमारी से मर गया। अहिल्याबाई का मन एक बार फिर इस दुनिया से उचट गया, लेकिन फिर अपने राज्य और जनता का ख्याल कर के वे अपने काम में जुटी रही।

अहिल्याबाई के पूरे जीवन में एक के बाद एक कई बार दुख पड़े। उनकी पुत्री मुक्ताबाई का विवाह एक वीर युवक यशवंत के साथ हुआ। उनके घर में एक पुत्र भी जन्मा। अहिल्याबाई बड़ी प्रसन्न हुई, परन्तु उनका नाती बचपन में ही मर गया। चार साल बाद जंवाई यशवंत का भी देहान्त हो गया। पति की मृत्यु पर मुक्ताबाई सती हो गई। एक साथ इतने दुख पड़ने पर कोई भी साधारण व्यक्ति अपना संतुलन खो देता, परन्तु अहिल्याबाई किसी फौलाद से कम नहीं थीं।

महारानी अहिल्याबाई होल्कर

बेटे की मृत्यु के बाद जब लालची जमींदार उनके राज्य की ओर नज़र उठाने लगे तो उन्होंने एलान करवा दिया कि उन्होंने सत्ता संभाल ली है। हालांकि अब तक भी वे ही राजकाज चलाती थीं, पर अब वे सिंहासन पर बैठी। उनकी जनता बहुत प्रसन्न हुई। उनके जीवन का यह भाग बहुत महत्वपूर्ण था।

राघोबा पेशवा नाम के एक छुटभैया पेशवा ने अहिल्याबाई पर हमला करके उनका राज्य हड़पने की सोची। अहिल्याबाई ने अपनी सेना की तैयारी शुरू कर दी। उन्होंने अपनी निगरानी में स्त्रियों की एक सेना भी तैयार कराई। अहिल्या बाई ने राजनीतिक सूझ-बूझ भरा एक पत्र राघोबा को भिजवाया। इसमें लिखा था– "आपने अबला समझकर मेरे राज्य को हड़पने की सोची है। मैं कैसी हूं इसका पता आपको युद्धभूमि में लग जाएगा। एक बात याद रखिए मैं हार गई तो कोई कुछ नहीं कहेगा, लेकिन यदि आप मुझसे हार गए तो कहीं मुंह दिखाने लायक नहीं रहेंगे। इसका विचार करके लौट जाने में ही आपका फ़ायदा है।" राघोबा ने लड़ाई का विचार त्याग दिया।

अहिल्याबाई ग्वालियर के महादाजी सिंधिया का बहुत आदर करती थीं, परन्तु एक बार उन्होंने अपने किसी राजनीतिक स्वार्थ की पूर्ति के लिए अहिल्याबाई को धमकी दी "बाई साहब हम पुरूष हैं। हमने मन में धार लिया तो आप पर क्या बीतेगी। यह सोच लो।" यह सुनते ही अहिल्याबाई गरज उठीं "जैसे तुम अपने घर की स्त्रियों को सुपारी का टुकड़ा समझ कर चबा जाते हो वही मुझे समझा है। जिस दिन इन्दौर पर तुम्हारी फौज कूच करेगी उसी दिन हाथी के पांव की सांकल से बांधकर तुम्हारा स्वागत करूं तभी मल्हार जी होल्कर की बहू कहलाऊं।"

उनके इन शब्दों से उनकी बहादुरी, आत्म सम्मान और ताक़त झलकती है। जहां एक ओर अहिल्याबाई इतनी वीर और मज़बूत थीं वहीं अपनी जनता के लिए उनका दिल मक्खन से भी नरम था। पहले जब भी कोई निसंतान विधवा कोई बच्चा गोद लेना चाहती थी तो उसे काफ़ी धन-सम्पत्ति राज्य को देनी पड़ती थी। अहिल्याबाई ने कहा-यह तो अन्याय है। जो धन उसके पति ने कमाया, उस पर उसका पूरा अधिकार है। उसे बच्चा गोद लेने का भी पूरा हक़ है। उन्होंने अपने राज्यकाल में सैंकड़ों कुएं, बावड़ियां, सराय, सड़कें, मंदिर बनवाए। वे खुद नर्मदा नदी के किनारे एक साधारण से घर में रहती थीं। उनका जीवन 'सादा जीवन उच्च विचार' का प्रतीक था। उन्होंने कभी पर्दा नहीं किया। वे राज दरबार में बैठकर सारे काम खुद करती थीं। घोड़े पर सवार होकर युद्ध संचालन करती थीं। उनका राज्य राजस्थान मध्य प्रदेश महाराष्ट्र के कई हिस्सों तक फैला हुआ था।

वे सन् 1734 में ब्याहकर होल्कर परिवार में आई थीं। 1795 तक की लम्बी उम्र तक वे उसी निष्ठा और मुस्तैदी से काम संभालती रहीं। उनके आत्मीय जनों की मृत्यु ने उन्हें भीतर से तोड़ दिया था। सत्तर वर्ष की पकी आयु तक राज्य करने के बाद उन्होंने अपने प्रिय शहर महेश्वर में प्रिय नदी नर्मदा के किनारे प्राण त्याग दिए।

अहिल्याबाई का जीवन चरित्र आज की कर्मठ औरतों के लिए भी उतना आदर्श है जितना दो सदी पहले था। □

पारिवारिक हिंसा-एक और आयाम

सुहास कुमार

एक लम्बे अरसे से महिलाओं पर हिंसा अनेक रूप लेती रही है। कभी उसे स्त्री होने के नाते बोलने से रोक दिया जाता है, तो कभी उसकी अग्निपरीक्षा ली जाती है। कभी उसे जुए में दांव पर लगाया जाता है, तो कभी उसे सरेआम निर्वस्त्र करने की कोशिश की जाती है। सती-प्रथा जौहर-प्रथा, विधवा-विवाह न होने देना, बाल-विवाह के रूप में यह हिंसा अनेक रूप लेती है। घरों में स्त्रियों की मार-पिटाई, तानाकशी, दहेज तथा अन्य बहानों से मानसिक उत्पीड़न पारिवारिक हिंसा के ही रुप है। घर-बाहर में यौन हिंसा भी आम बात है।

आज इस सूची में एक और आयाम जुड़ गया है। वह काम काजी महिलाओं का आर्थिक शोषण। पहले तो उसे जायदाद और शिक्षा से मोहताज रखा गया। आज जब स्थिति में कुछ बदलाव आया है तो एक नई समस्या पैदा हो गई है। चाहे आर्थिक मजबूरी हो या स्त्री की निजी इच्छा आज की स्त्री नौकरी पेशा अपना रही है। विडम्बना यह है कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होकर भी वह आर्थिक आजादी नहीं पा सकी है। न तो वह पूरी तरह से आत्मनिर्भर हो पाई है और न ही अपनी कमाई को अपने ढंग से खर्च करने के लिए वह आजाद है। घर में उसकी मेहनत की कोई कीमत नहीं होती। बाहर नौकरी करके कमाए वेतन से भी घरेलू खर्च चलाना होता है। इसमें दिक्कत तब आती है जब पुरुष घरेलू ज़िम्मेदारियों से धीरे-धीरे हाथ खींचते ही जाते हैं। उनके शौक और मनोरंजन का खर्चा घर की जरूरतों से बढ़कर हो जाता है। उनकी कमाई का बड़ा हिस्सा उनके जेबखर्च पर खर्च होता है। स्त्री घर-बाहर दोनों जगह खटती है। फिर भी वह आर्थिक असुरक्षा से घिरी रहती है।

यह समस्या आज निम्न व मध्यम वर्ग तक ही सीमित नहीं रह गई है। आज अनेक घरों में आर्थिक तनाव के कारण पारिवारिक जीवन कलहपूर्ण हो रहा है। यही नहीं परिवारों के टूटने का कारण भी बन रहा है। एक मनोवैज्ञानिक डॉ. कोठारी ने बताया कि उनके यहां एक डाक्टर दम्पत्ति का केस आया। पति घर में एक पैसा भी नहीं देता था। अपनी सारी कमाई को वह अपनी निजी संपत्ति मानता था।

साभार अगेंस्ट ऑल औड्स

पति घर में कितना खर्चा दे इस संबंध में कोई कानून नहीं है। हालांकि आज यह तलाक के

मुख्य कारणों में से एक बन गया है। विवाहित जीवन में एक समय आता है जब स्त्री को लगता है कि उसके हिस्से में क्या आया? हर तरह से सहयोग करके यदि मानसिक व शारीरिक उत्पीड़न ही मिले तो अकेले रहना बेहतर है। एक महिला वकील, रानी जेठमलानी का कहना है कि पारिवारिक हिंसा और वैवाहिक गृह (मैट्रोमोनियल होम) बिल पारित होना बहुत ज़रूरी है, तभी स्त्रियों को उनके अधिकार व न्याय मिल सकेंगे। आज कानूनी स्थिति यह है कि जो पति पत्नी को अपनी कमाई का आधा हिस्सा नहीं देते उनके खिलाफ़ कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की जा सकती। 'वैवाहिक घर बिल' में पत्नी को पति के आवास गृह पर 50 फ़ीसदी अधिकार मिलने की मांग की गई है। जब तक कानूनी रूप से यह अधिकार नहीं मिलता क्या स्त्रियां अपने बुनियादी अधिकारों से मोहताज रहेंगी? यह बहुत ज़रूरी है कि पति अपनी ज़िम्मेदारी पूरी तरह समझें। केवल औरतों के कंधे पर समझौते और पारिवारिक शांति की पूरी ज़िम्मेदारी नहीं डाली जा सकती।

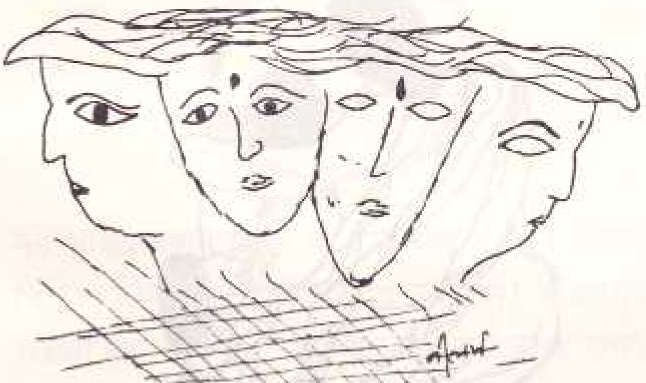

एक सच यह भी

हम अपनी बेटियों को मानसिक रूप से तैयार नहीं करते। रूमानी सपने संजोए जब एक पढ़ी लिखी लड़की विवाहित जीवन में प्रवेश करती है तो अनेक सच्चाइयों का सामना उसे करना पड़ता है। ससुराल में एक अलग तरह के माहौल में वह खुद को ढाल नहीं पाती। नतीजन झगड़े और क्लेश बढ़ जाते हैं। ज़रूरत लड़कियों को मज़बूत बनाने की है। उन्हें पूरी पारिवारिक और सामाजिक शिक्षा देने की है। कई सामाजिक संगठन व महिला संगठन ऐसा मंच प्रस्तुत करते हैं जहां लड़कियां व महिलाएं खुलकर बात कर सकें। खुद हमें एकजुट होकर पारिवारिक हिंसा से जूझने का रास्ता निकालना होगा।

इसमें ज़्यादा कुछ नहीं, मुख्य रूप से सोच बदलने की जरूरत है। एक मिथ्या धारणा व भ्रांति यह है कि घर पारिवारिक औरतों की सुख-सुविधा के लिए बनाया गया है। यह मुख्यतया उनकी ज़रूरत है। गहराई से देखें तो परिवार में सबसे ज़्यादा किसे सुख-सुविधा मिलती है? औरतें तो अधिकतर एक बेचारगी व लाचारगी की स्थिति में ही रहती हैं। समझौतों से जीया जीवन कोई जीवन नहीं है। क्या हम औरतें कभी अपनी शर्तों पर जीवन जी सकेंगी? सोच कर देखें। हल तो हमें ही निकालना होगा। □

खुद मैंने बोया, खुद मैंने सींचा
खुद मैंने काटा, खुद मैंने ढोया
फिर तुमने मुझे, बोझ क्यों माना?

परदेस में बसी–सखी

जुही

सबला के इस अंक में आपको ज़ानकारी दे रहे हैं–अमरीका के न्यूयॉर्क शहर में काम कर रही महिला संगठन "सखी" के बारे में। अभी तक सिर्फ़ हमारे देश के संगठनों के बारे में हम आपको बताते रहे हैं। यह जानकारी इसलिए दे रहे हैं क्योंकि हमारे समाज में काफ़ी दफ़ा लड़कियों की शादी अमरीका या लंदन जैसे विदेशों में रहने वाले लड़कों से कर दी जाती है। वहां जाकर अगर वह दुख भोगें तो कहां मदद के लिए जाएं। शीतल की कहानी एक मिसाल है उन लड़कियों के लिए और "सखी" एक संस्था जहां वह सहारा पा सकती हैं।

आपबीती शीतल की

मेरा नाम शीतल है। आज मैं अपनी आप बीती आपको सुना रही हूं। आप पूछेंगी क्यों? इसलिए क्योंकि मैं बताना चाहती हूं कि मैंने भी जीवन में काफ़ी दुख झेले हैं। खून के घूंट पीकर चुप रही, सिर्फ़ इसलिए कि मेरे बच्चे मेरे साथ रहें। मेरा घर बसा रहे, पर जब ऐसा नहीं हुआ तो मैंने फैसला किया कि मैं चुप नहीं रहूंगी। डटकर सामना करूंगी और मैंने ऐसा ही किया। आज मैं बहुत खुश हूं। दुखः तकलीफ़ से आज़ाद हूं। खुद अपने पैरों पर खड़ी हूं।

बचपन से जवानी तक

मेरे मां-बाप ने बड़े नाज़ से मुझे पाला-पोसा था। इकलौती बेटी थी। बी.ए. पास किया। सब ठीक चल रहा था। एक दिन कार दुर्घटना में दोनों मां-बाप चल बसे। मैं अनाथ हो गई। मामा के घर रहने लगी।

एक रोज़ मामा नीरज का रिश्ता लेकर आए लड़का अमरीका में रहता था। वहां बड़ी फैक्ट्री चलाता था। उनकी कोई मांग नहीं थी। लड़की राज करेगी। सो मेरी शादी ठीक हो गई। बाद में मुझे पता चला कि नीरज ने मेरे मामा को मुझे ब्याहने के पचास हज़ार रुपये दिए थे।

जीवन नर्क़ हो गया

शादी हो गई। मैं अमरीका चली गई। बस तभी नर्क के दरवाजे मेरे लिए खुल गये। पता चला मेरे पति पहले से ही किसी अमरीकन लड़की से शादी कर चुके थे। अपनी मां को खुश रखने के लिए एक भारतीय बहू ब्याह लाए थे। तो मुझे सास और सौतन के साथ रहना पड़ा।

नीरज क्या करता था। कहां जाता था मुझे कुछ पता नहीं था। मेरी सौतन और नीरज मकान के एक हिस्से में रहते थे। मैं अपनी सास के साथ

दूसरे हिस्से में। नीरज दिन भर अपनी पहली पत्नी के साथ घूमता-फिरता। मुझे कभी कहीं नहीं ले जाता। कहता मुझे सलीका नहीं है पार्टी में उठने-बैठने का। मैं फूहड़ हूं।

कोई मददगार नहीं

मेरी सास और सौतन मेरी कोई मदद नहीं करती, उल्टा मुझे मारती-पीटतीं, ताने देतीं। दिन रात मैं कोल्हू के बैल की तरह काम में जुटी रहती।

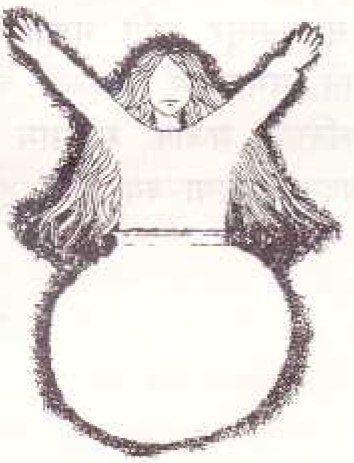

मैंने भारत अपने मामा को इस बीच न जाने कितनी चिट्ठियां लिखीं। पर कोई जवाब न आया। मैं एकदम अकेली रह गई थी। इस बीच मुझे गर्भ ठहर गया। एक तरफ पेट में बच्चा। दूसरी तरफ कमरतोड़ काम और अकेलापन। पर मैं चुप रही। दो साल गुजरे। मेरी सास गुज़र गई। अब नीरज आजाद था। अपनी मनमानी और ज़्यादा करने लगा। वह मुझे तरह-तरह से जल़ील करता। अपनी सौतन के पैर दबाने को कहता। मेरे सामने उसके साथ छेड़छाड़ करता। मुझे शराब पीने को मजबूर करता। मना करती तो मारता पीटता। मैं तंग आ चुकी थी।

मैंने नीरज से कई बार कहा। मैं भारत चली जाऊंगी। पर वह नहीं मानता। कहता मैं नहीं जा सकती। मुझे घर में बंद करके बाहर जाता। फोन में ताला लगा देता। पांच साल और गुजर गए। मेरी बेटी छः साल की हो गई। एक दिन मेरे सब्र का बांध टूट गया। घर में पार्टी थी। मेरे पति शराब में धुत थे। मुझे खाना लगाने को कहा। खाना लगाने में ज़रा सी देर क्या हुई वह आपे से बाहर हो गया। मेहमानों के सामने उसने मुझे खूब पीटा। यहां तक कि मेरा हाथ तोड़ दिया।

मैंने फैसला किया

मेरे पड़ोस में रुबीना नाम की एक पाकिस्तानी औरत रहती थी। उसने सखी के बारे में मुझे बताया। एक दिन जब घर में कोई नहीं था। मैं खिड़की तोड़कर रुबीना के साथ सखी चली गई। अपनी बेटी को भी साथ ले गई।

वहां की बहनों ने मेरी पूरी मदद की। सबसे पहले तो मुझे रहने को जगह दी। फिर पुलिस में नीरज की शिकायत दर्ज़ कराई। मैं पढ़ी-लिखी थी। मुझे नौकरी दिलाई। छः महीने तक मैं उनके साथ रही। पैसे जोड़े और अपने देश वापस आ गई। मेरे पति ने बहुत हाथ-पैर मारे। मेरे ख़िलाफ़ चोरी की रपट लिखाई। बच्ची को छीनने की कोशिश की, पर सखी की सहायता से हमें हिम्मत मिली।

आज मैं अपने पैरों पर खड़ी हूं। नौकरी करती हूं। मेरी बेटी कॉलिज में पढ़ रही है। मैं सखी की बहुत आभारी हूं। उनकी मदद से ही आज मैं अपने देश में इज़्ज़त से जी रही हूं। अब मैं किसी से नहीं डरती अपनी दुखः तकलीफ़ से आज़ाद हूं। सिर उठाकर जीती हूं। किसी के आगे हाथ नहीं फैलाती। ☐

सखी का पता:
सखी, पो. बाक्स 20208, ग्रीली स्केवयर स्टेशन, न्यूयॉर्क
एन.वाई 10001-006, यू.एस.ए., फोन (212)695-5447

तीजनबाई

सुनीता ठाकुर

'तीजनबाई' आज कोई नया नाम नहीं है। अपने देश की संस्कृति, लोकगीत, नृत्य को जानने वाला हर शख़्स उसे जानता है। छत्तीसगढ़ के गानेयरी गांव की तीजन। एक आम ग्रामीण परिवार की बहू तीजन। एक गरीब आदमी की गरीब पत्नी, बच्चों की मां पर इन सबके साथ या इनसे ऊपर एक खुद्दार औरत। जिसने तमाम रूढ़ियों और बंधनों को ताक पर रखकर अपनी एक अलग पहचान बनाई।

अकेली यात्रा

जब वह चली थी, उसके साथ कोई नहीं था। देहरी से बाहर, घूंघट से ऊपर तीजन ने झांका। उसे अपने मन का वह पंछी खुली उड़ान भरता नज़र आया जो अब तक उसके भीतर फरफरा रहा था। उसने ठान लिया। घूंघट उठ सकता है– देहरी लांघी जा सकती है, बंधन तोड़े जा सकते हैं। पल्लू से फेंटा बांध, हाथ में तंबूरा थामे वह स्टेज पर उतर आई-लोग हक्के-बक्के थे। घर की बहू तीजन और स्टेज पर बिजली सी कौंधती तीजन-सच कौन थी वह या यह। इतनी चमक, इतना हुनर, इतनी तेज़ी, इतना जोश-लोग हैरान थे और तीजन, उसके लिए तो फैला था पूरा मंच रूपी आकाश–उसकी यात्रा यहीं से शुरू हुई। सास-ससुर, पति भड़क उठे। नाक कटने के ताने, समाज में बेइज़्ज़ती के उलाहने, लोगों की फब्तियां, मजाक, सरेआम पति द्वारा बेइज़्ज़ती, बदनामी क्या-क्या नहीं हुआ, मगर तीजन के पास वक्त कहां था– उसे तो उन आकाशों की थाह लेनी थी। सामने थीं उमंगें,

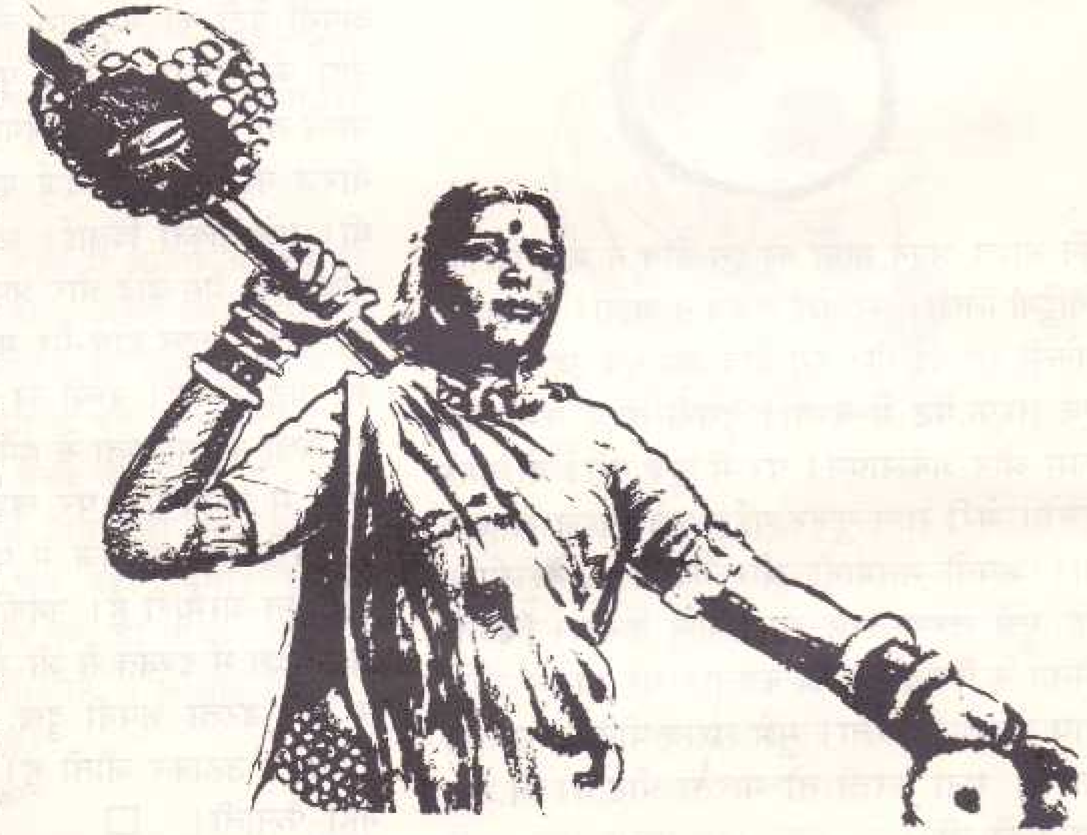

जोश और पूरा एक महाभारत–जीवन का और शास्त्रों का भी। उसके पास हथियार नहीं थे, ज्ञान नहीं था, संगी साथी भी नहीं। पति, बच्चे, घर-बार सब पीछे छूट गया। वह चली आई–अपने हौसले, अपने निश्चय, अपने हुनर, लगन और मेहनत को पल्लू में बांधकर।

बंधन टूटे

तीजन आज़ाद थी। उसे नियमों की परवाह नहीं थी- अब कौन उसे बांध सकता था। वह समूहों में गाती, छोटे-छोटे मंचों पर गाती, मेला-हाट, तीज-त्यौहार किसी भी मौके पर सबके सामने। अपनी कड़कती, गरजती आवाज़ में पांडवों की एक-एक कथा गाती। जैसे सागर की अनगिनत लहरें टकराती हों। तीजन का जोश पछाड़ें मारता और सुनने वाले देखते रह जाते। वह बिजली की तरह स्टेज पर कौंधती। कभी शेर की तरह दहाड़ती हुई, कभी मां की तरह दुलारती हुई, कभी पत्नी की तरह प्रेम में डूबी, कभी राजनीतिज्ञ की तरह कुटिल चाल, व्यंग्य, हाव-भाव में बोलती हुई। शरीर का अंग-अंग फड़क उठता, पोर-पोर थिरकने लगता, उसका तंबूरा कभी अर्जुन की प्रत्यंचा बन जाता, तो कभी भीम की गदा सा तन उठता। पांडव-कथा का गान करती तीजन अपनी सुध-बुध बिसरा बैठती। उसके चारों ओर एक मोहित करने वाली आभा फैली होती।

तीजन अपने नाम में संगीत समेटे, काम में लय बांधे और आवाज में सुर-ताल लिए विरोध की साकार-प्रतिमा। उसने परंपराओं की जड़ता नकार दी, मगर जड़ होती एक पारम्परिक लाककला 'पांडवानी' को नया जीवन दिया, नई पहचान दी।

लोककला का नया रूप

तीजन अपने नाम में संगीत समेटे, काम में लय बांधे और आवाज में सुर-ताल लिए विरोध की साकार-प्रतिमा। उसने परंपराओं की जड़ता नकार दी, मगर जड़ होती एक पारम्परिक लोककला 'पांडवानी' को नया जीवन दिया, नई पहचान दी। तुलसीदास की तरह उसने शास्त्रकथा को जनता तक पहुंचाया और मीरा की भांति गीतों को नया अर्थ दिया।

तीजन का यह नाटक अपने बूते पर था। अपनी प्रतिभा, अपनी कल्पना और सोच उसमें छाई रहती। कला पुरानी थी, अन्दाज़ नया। तीजन के हाव-भाव सदियों पुराने पांडवों को सामने ले आते। लोगों ने तीजन का तालियां बजाकर स्वागत किया। गांव की एक गुमनाम तीजन संसार के चमकते सितारों में जगमगा उठी–सिर्फ अपनी मेहनत अपने हौसले के बल पर।

आज उसका बेटा स्टेज पर उसका साथ देता है। पति उसकी तारीफ करते नहीं थकता। तीजन भरा-पूरा परिवार छोड़कर जरूर निकली थी। मगर उससे कहीं अधिक खुशहाल गृहस्थी आज उसके पास है। वही घर, वही लोग, वही समाज और वही तीजन–बदला है सिर्फ घूंघट। टूटा है सिर्फ देहरी का बंधन। गूंजी है सिर्फ आवाज़ अपने अधिकारों की, तनी है सिर्फ एक मुट्ठी फैसले की। हममें से न जाने कितनी तीजन आज भी समाज और परिवार के दायरों में अपनी प्रतिभा और प्रत्यंचा लिए बैठी हैं। गांव से संसार तक उनकी कल्पनाएं भी उड़ानभर सकती हैं–देर सिर्फ़ तीजन जैसे उत्साह और फैसले की है।

धरती तुम्हारी

सीमा श्रीवास्तव

हस्ताक्षर कर
मेरे अस्तित्व पर,
कैद कर देना चाहा
बन्द फाईलों में,
जो पड़ी किसी कोने में
गर्द लिपटी
राह देखती हो तुम्हारी,
उदारता को मेरी,
क्यों समझ लिया-
कमज़ोरी तुमने?
नहीं जानते,
मैं तो स्याही हूं,
जिससे रंगी है-
धरती तुम्हारी।

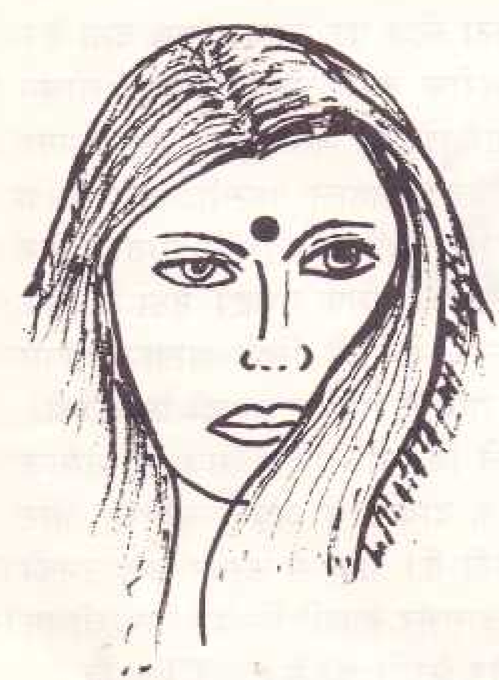

धरती तुम्हारी मां

सुनीता ठाकुर

मैंने मां से कहा
मां!
तुझे चूड़ियां चाहिएं
बिंदियां भी नहीं रहीं-ले आना
और मां ने
बापू की ओर देख भर लिया बस
मय मुस्कान।
मैंने मां से कहा-
मां!
तू भी ले लिया कर दूध
कभी-कभी
मां हंसी ज़ोर से
तूने पिया-मैंने पिया।
मैंने मां से कहा-
मां!
तू किस मिट्टी की बनी है
थकती नहीं करते काम
वह खिलखिलायी
अपनी नानी से पूछियो।
मैंने जब भी
कुछ कहा-मां से
वह मुस्कुरायी बस
दूसरों में अपनी खुशी का
हवाला दे।

परिचय

मणिमाला

मैं एक औरत हूं
दलित मजदूर औरत
तुम्हारी अर्थशास्त्र की
सबसे सटीक परिभाषा हूं मैं
तुम्हारी संस्कृति की
सबसे विभत्स जिज्ञासा हूं मैं
हां, एक दलित मज़दूर औरत हूं मैं।

मेरी "बेइज़्ज़त" बेटियां नाचती रहीं
"इज़्ज़तदारों" में बंटती रहीं
टूट-टूट कर खत्म होने तक
सुनो, मेरी बन्द जुबान में
उन्हीं की आवाज़ है।

और मैं?
तुम्हारे सारे जुल्म सहती रही
अपने पति से नहीं, तुमसे बच्चे जनती रही
क्योंकि
मुझ पर ऋणों का बोझ है
रोटी के कई टुकड़ों का
कपड़ों के कई चिथड़ों का,

मेरी जलती हुई इन दो आखों में
एक सवाल है
तुम्हारी व्यवस्था में तुम्हारा ऋण कभी चुकेगा
तुम्हारी गणना और गणित में यह कभी सधेगा?

समझो, इन सवालों में जवाब भी है
अब मैं "सूअर के खोभाड़" से निकलता हुआ
इन्कलाब हूं,
तुम्हारी भ्रष्ट व्यवस्था के लिए धधकती हुई
आग हूं।

आवाज़

स्नेहमयी चौधरी

जब भी वह बोली
अपनी बात कहनी चाही
उसकी आवाज़ बंद कर दी गई।

ऊपरी आवाज़
बन्द हो जाना भर,
आवाज़ का सचमुच बन्द हो जाना है क्या?

क्या औरत ही औरत की दुश्मन है?

कमला भसीन

जब हम औरतों की कठिनाइयों और उनके साथ होने वाली ज़्यादतियों की बात करते हैं तो अक्सर कई स्त्री या पुरुष कह उठते हैं "आप पुरुषों को ही क्यों दोष देती हैं, औरतें भी तो औरतों की दुश्मन होती हैं। घरों में मां ही तो बेटे और बेटी में भेदभाव करती है। सास-ननद ही तो बहू को तंग करती हैं। औरतें कहां एक दूसरे की मदद करती हैं।"

हमारे समाज में पुरुष सूर्य के समान है और स्त्रियां उपग्रहों के समान। सूर्य की अपनी चमक होती है, लेकिन उपग्रह अपनी चमक सूर्य से पाते हैं। ठीक इसी प्रकार सास-बहू, ननद सभी 'पुरुष' से चमक, पद, इज़्ज़त पाने की कोशिश करे हैं।

औरतें भी एक दूसरे के साथ ज़्यादती करती हैं यह सच है इसे नकारा नहीं जा सकता, लेकिन इस बात पर गहराई से सोचना ज़रूरी है। यह समझना ज़रूरी है कि औरतें एक दूसरे के साथ दुश्मनी का व्यवहार क्यों करती हैं। मांये क्यों बेटियों पर बंधन लगाती हैं? उन्हें क्यों आगे बढ़ने के मौके नहीं देतीं।

इस विषय पर ख़ूब बहस करके, सोचकर, हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि बात को ठीक से समझने के लिए हमें पूरे समाज को समझना होगा। अपने सामाजिक ढांचे या व्यवस्था को समझना होगा। लोगों के सोचने के ढंग को समझना होगा। मात्र कुछ पुरुषों और स्त्रियों को दोष देने से बात नहीं बनेगी।

पितृसत्ता क्या है?

हमारा सामाजिक ढांचा पुरुष-प्रधान या पितृ सत्तात्मक है। पितृसत्ता का सीधा-सादा मतलब है पिता या पुरुष का परिवार पर राज या सत्ता। पितृसत्ता एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसके तहत पिता या कोई पुरुष परिवार के सभी सदस्यों, संपत्ति व आर्थिक साधनों पर मुखिया के रूप में नियंत्रण रखता है। वही मुख्य माना जाता है, उसी के नाम से परिवार जाना जाता है। उसके बाद उसकी सत्ता व अधिकार उसके पुत्र या किसी अन्य पुरुष के हाथ में चले जाते हैं। यानी खानदान या वंश पुरुषों से चलता है, जायदाद पर पुरुषों या पुत्रों का हक़ होता है। इसी पितृसत्ता से जुड़ी हुई ये धारणाएं हैं कि पुरुष स्त्री से ऊंचा है, वह भगवान का रूप है, वह स्त्री का पति, स्वामी या मालिक है; स्त्रियों को पुरुषों की संपत्ति का ही एक हिस्सा माना जाता है। यहां तक कि स्त्री के शरीर पर भी पुरुषों का हक़ माना जाता है।

पुरुष तो इस विचारधारा को मानते ही हैं, बहुत

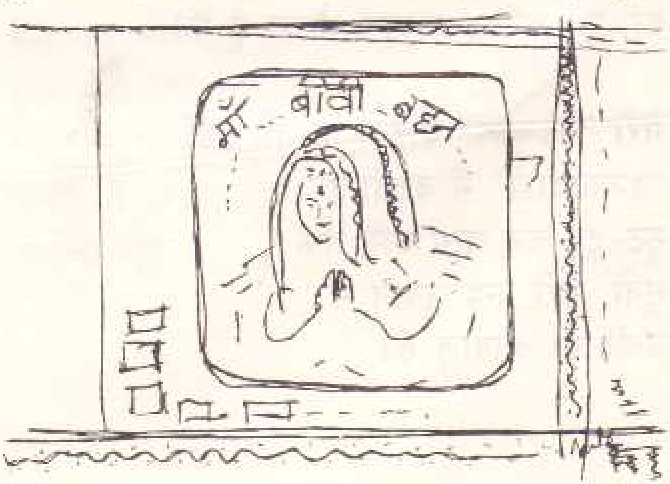

सारी स्त्रियां भी इसी तरह सोचती हैं। आख़िर औरतें भी तो इसी ढांचे का एक हिस्सा हैं। हज़ारों सालों से औरतों ने यही सब देखा और सुना है।

धर्म भी यही सब सिखाते आ रहे हैं। सभी धर्म पुरुषों ने बनाए हैं। पुरुष ही उनकी व्याख्या करते हैं, वे ही चलाते हैं धर्मों को। सभी धर्म पुरुष को अधिक महत्व देते हैं। वे पुरुष को परिवार का मुखिया मानते हैं, पत्नी को पति या स्वामी या मालिक के अधीन मानते हैं।

धर्मों का प्रभाव हमारी क़ानून व्यवस्था पर भी है। इसीलिए हमारे क़ानून भी पुरुष-प्रधान हैं।

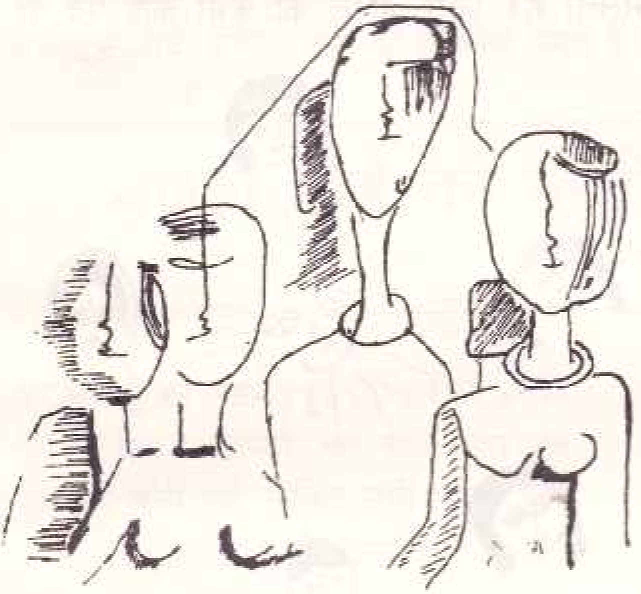

वे पुरुषों को अधिक महत्व और हक़ देते हैं। शिक्षा में, अख़बारों, पत्रिकाओं, किताबों, रेडिओ, टेलीविज़न सबमें पुरुषों का बोलबाला है। राजनीति, व्यवसाय, संपत्ति सब पुरुषों के हाथ में है यानी चारों ओर से यही सुनाई देता है कि पुरुष श्रेष्ठ है। औरतों ने यही सब देखा और सुना है। इसीलिए वे भी इसे ही सच मान लेती हैं। यही बातें फिर वे अपने बच्चों को सिखाती हैं-बेटे को आज़ादी बेटी को बंधन, बेटे को अधिकार बेटी को कर्तव्य, बेटे को रौब जमाना बेटी को दबाना।

औरतों द्वारा पुरुषसत्ता स्वीकारने के और भी कई कारण हैं। औरतों को पढ़ने-लिखने, स्वतंत्र रूप से सोचने के अवसर कम दिए जाते हैं। उन्हें सीमित दायरों में रखा जाता है। इसीलिए न वे नया देख सकती हैं, न सोच सकती हैं। इसी वजह से वे उसी पुरानी लकीर पर चलती हैं। यदि औरतों के दिमाग में पितृसत्ता के बारे में सवाल उठते भी हैं तो वे खामोश ही रहना पसंद करती हैं। कारण, उनके अंदर हिम्मत नहीं होती पुरुषों से सवाल-जवाब करने की। वे पूरी तरह से पुरुषों पर या तो सचमुच में निर्भर होती हैं या वे यह मानती हैं कि वे निर्भर हैं। ज़्यादातर औरतें खुद इतना नहीं कमातीं कि वे अपना और अपने बच्चों का पेट पाल सकें, उन्हें रहने को घर दे सकें। संपत्ति उनके नाम से नहीं होती। इसीलिए वे पितृसत्ता को और बढ़ाती ही रहती हैं। चूंकि औरतें इसी समाज का हिस्सा हैं इसीलिए एक मां ही अपनी बेटी को बेटे से कम परोसती है, कम शिक्षा देती है, कम आज़ादी देती है। कई सासें बहुओं की हत्या करने की साजिश में भागीदार होती हैं। मां-बेटी के आपसी तनाव भी अक्सर बहुत जटिल व पीड़ादायक होते हैं।

स्त्रियों का योगदान क्यों?

पितृसत्ता की जड़ें इसीलिए मज़बूत हैं, क्योंकि इसे चलाने में इससे शोषित स्त्रियां भी पूरा योगदान देती हैं। पर ऐसा क्यों है? शायद इसलिए कि औरतें बाध्य हैं, उन्हें कोई और रास्ता दिखाई नहीं देता, वे ये जानती ही नहीं कि जीने का कोई और

रास्ता भी हो सकता है। एक मां नौ महीने पेट में बच्चे को पालने के बाद यह सुनकर कि बेटी हुई है, सुबक पड़ती है। प्रसव के दर्द से समाज के तानों का डर कहीं अधिक होता है। दोष तो व्यवस्था का है। हर मां जानती है कि वर्तमान व्यवस्था में बेटी का होना क्या मतलब रखता है।

यह भी देखने में आता है कि पिता प्रत्यक्ष रूप से बेटी पर बंधन नहीं लगाते। वे सारे कायदे-क़ानून मां के जरिए लागू करवाते हैं। खुद भले बने रहते हैं। हर मां जो एक औरत है इस समाज में औरत होने की पीड़ा को खूब जानती है। इसीलिए अपनी बेटी को सुरक्षित रखने के लिए खुद दारोगा बन जाती है। मां को इस बात का भय हमेशा बना रहता है कि कहीं बेटी पर जुल्म न हो, समाज उसे कहीं पवित्रता की कसौटी पर खोटा न करार दे, कोई यह कह दे कि मां ने कुछ सिखाया ही नहीं। सिखाने की सारी ज़िम्मेदारी अक्सर मां अकेले ही ढोती है। नैतिकता के सारे संदेश उसे ही बच्चों तक पहुंचाने होते हैं और चूंकि प्रचलित नैतिकता पुरुष सत्तात्मक है, वे इसे ही थोपती रहती हैं।

परन्तु, कई बार मां के दिल को टटोलने पर यह भी देखा गया है कि उसका मन समाज की लगाई आग के धुएं की घुटन से भर गया है। वह कई बार जब खुल कर बोलने की हिम्मत करती है तो कहती है, "अगर मैं पढ़ी लिखी होती, अपने पैरों पर खड़े होने लायक होती तो इतना कभी न सहती।" बहुत सी मांओं का यह भी अरमान होता है कि जो वे नहीं कर पाईं उनकी बेटियां करें, लेकिन उन्हें अक्सर इतनी छूट नहीं होती, उनमें इतनी आर्थिक शक्ति नहीं होती कि वे अपनी बेटियों को सशक्त व स्वावलंबी बना सकें। वास्तव में औरतें इस ढांचे में पूरी तरह से फंसी हुई हैं।

जहां तक सास और बहू के रिश्ते का सवाल है, एक बस्ती की ग़रीब औरत ने इसे बहुत सरल तरीके से हमें समझाया। वह बोली, "जैसे दो ग़रीब देशों की लड़ाई में हमेशा किसी अमीर देश का हाथ होता है वैसे ही दो औरतों की लड़ाई में अक्सर पुरुष का हाथ होता है।"

सास-बहू के रिश्ते को भी गहराई से समझने की ज़रूरत है। एक सास के लिए बहू का मतलब होता है अपने बेटे का बंटवारा। और फिर सास बनकर किसी और पर हुक्म चलाने का भी मौक़ा मिलता है। जिस औरत को कभी कोई पद या सत्ता न मिली हो उसके लिए इस सत्ता का ग़लत इस्तेमाल करने की पूरी संभावनाएं रहती हैं। आखिर वह भी इंसान है और उसमें भी वही संस्कार हैं और वही कमियां हैं जो सब में होती हैं।

वह भी पितृसत्ता की विचारधारा की शिकार है। वह भी बेटे की मां होने को बड़ी बात मानती है,

बहू को अपने बेटे के अधीन मानती है। उसके मन में यह भी खतरा होता है कि बेटा पूरी तरह से बहू का न हो जाए। दूसरी तरफ़ बहू भी अपना घर अपनी मर्ज़ी से चलाना चाहती है। उसने बचपन से यही सपने देखे थे कि शादी के बाद वह अपनी मर्ज़ी का खा-पहन सकेगी, अपनी मर्ज़ी से उठ-बैठ सकेगी। इन सब कारणों से सास-बहू में तनाव रहता है। यह तनाव पितृसत्तात्मक ढांचे की ही देन है।

हमारे समाज में पुरुष सूर्य के समान है और स्त्रियां उपग्रहों के समान। सूर्य की अपनी चमक होती है, लेकिन उपग्रह अपनी चमक सूर्य से पाते हैं। ठीक इसी प्रकार सास-बहू, ननद सभी 'पुरुष' से चमक, पद, इज्ज़त पाने की कोशिश करते हैं। बेटा अगर सास के कब्जे में है तो सास की इज्ज़त होगी, उसकी देखरेख होगी, वरना नहीं। दूसरी तरफ पति अगर पत्नी के नज़दीक है तो पत्नी की स्थिति बेहतर होगी। एक ही पुरुष पर निर्भर औरतें-चाहे वे सास-बहू हों, सत्ता की लड़ाई में एक दूसरे की दुश्मन बन जाती हैं। अगर स्त्रियों की अपनी चमक हो, अगर उन्हें पद व पेट के लिए पुरुष पर निर्भर न रहना पड़े तो इस प्रकार की रस्साकशी न हो। एक सशक्त, आत्मनिर्भर, खुश औरत शायद ही किसी औरत से दुश्मनी करे। इसीलिए हमारी लड़ाई पुरुषों से नहीं है, बल्कि पुरुष सत्ता से है व उन सब स्त्रियों और पुरुषों से है जो पुरुष सत्ता को बनाए रखना चाहते हैं। □

बछड़ी होने की खुशी, लड़की होने का दुःख

तसलीमा नसरीन

घर में बहू को लड़की हुई है, सुनकर प्रसूति गृह के बाहर इंतजार कर रही वृद्धा मुंह घुमाकर चली गई, लेकिन उसी घर में जब उसकी गाय बछिया को जन्म दती है, तब वही वृद्धा कहती है, "भगवान ने इतने दिनों बाद हमारी सुन ली।" उस वक्त कितनी खुश होती है वह। लड़की जाति के जन्म लेने पर परिवार के लोग दुःखी होते हैं, लेकिन मादा जानवर के जन्म लेने पर खुशी से फूले नहीं समाते। इसका अर्थ है परिवार में लड़की जात की कीमत पशुओं से भी कम है। ☐

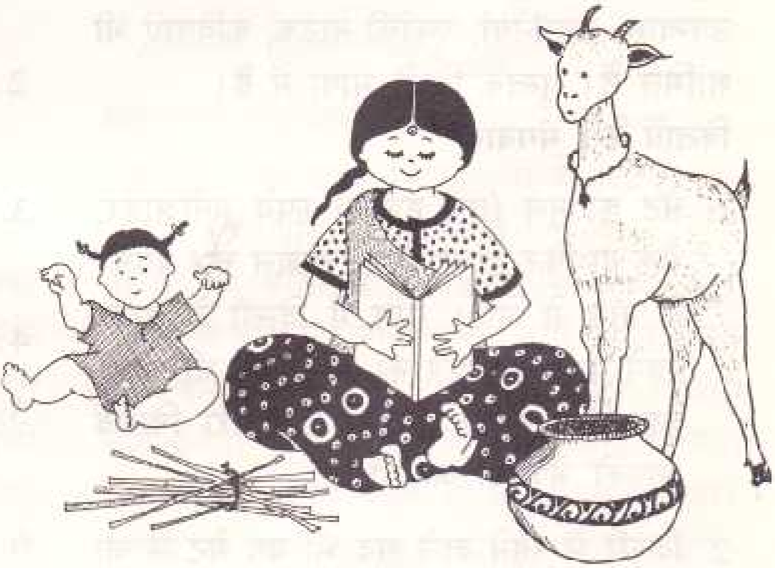

हर गांव में हो पुस्तकालय–लघु पुस्तकालय योजना

जुही

किताबें हमारी सबसे अच्छी दोस्त हैं। कैसे? हम इन्हें पढ़कर जानकारी बढ़ा सकते हैं। अच्छी-बुरी चीज़ो के बारे में जान सकते हैं। अकेले या फिर संगी साथियों के साथ इन्हें बांट अपना वक्त गुजार कर सते हैं। हर उम्र के लोगों, बच्चों, बड़ों, मर्द-औरतों सभी के लिए किताबें पढ़ना एक अच्छी व ज्ञानवर्धक हॉबी है।

दिल्ली में छोटे-छोटे शहरों, गांवो, स्कूलों आदि में अच्छी और सस्ती किताबें उपलब्ध कराने की एक सरल योजना शुरु की गई है। इस योजना को शुरु करने का श्रेय श्री भारत डोगरा को जाता है। योजना के तहत एक हज़ार रुपये की राशि भेजने पर आप सौ पुस्तकों का एक सेट मंगा सकते हैं। पुस्तकें स्वास्थ्य, पर्यावरण, पशु-पक्षी, इतिहास, प्रकृति, समाज सुधर आदि विषयों पर है। इनमें उपन्यास, कहानियां, एकांकी नाटक, कविताएं भी शामिल हैं। पुस्तकें हिन्दी भाषा में हैं।

किताबें कैसे मंगवाए

1. सेट का मूल (एक हज़ार) रुपये मनीआर्डर, चैक या फिर ड्राफ्ट द्वार "सोशल चेंज पेपर्स" के नाम से भेजें। साथ में दिल्ली के बाहर रहने वाले सौ रुपये का डाक खर्च भी भेजें। कुछ दिनों में रजिस्टर्ड पार्सल द्वारा किताबें आपको भेज दी जाएंगी।
2. दिल्ली में रहने वाले खुद भी यह सेट ले जा सकते हैं। हां मूल्य राशि अग्रिम भेजनी होगी।
3. सेट मंगवाते समय अपना पूरा पता साफ-साफ शब्दों में लिखें।
4. दिल्ली के किसी भी पते पर पुस्तकें मंगवाई जा सकती हैं।
5. पुस्तकें मंगवाने पता है:

सोशल चेंज पेपर्स
द्वारा भारत डोगरा, लेखक व प्रकाशक
सी-27, रक्षा कुंज, पश्चिम विहार
नई दिल्ली-110063
फोन : 5575303

इसके अलावा इस पते पर यह अन्य सेवाएं भी उपलब्ध हैं।

1. 45 चुने हुए विषयों पर हिन्दी व अंग्रेजी की प्रैस कतरनें।
2. धरती मां-एन.एफ.एस. इण्डिया त्रैमासिक पत्रिका।
3. हिन्दी व अंग्रेजी में विकास, पर्यावरण व समाज कल्याण के विश्वकोष।
4. भारत डोगरा लिखित अन्य पुस्तकें।
5. छोटे समाचार पत्रों, न्यूज़लेटर के लिए लेखों व रिपोर्टो।
6. अन्य जानकारी।

बदलाव की हवा

वीणा शिवपुरी

दुर्गा जैसी हज़ारों लड़कियां हैं जो छोटे बड़े शहरों और कस्बों की झुग्गी बस्तियों में रहती हैं। घर में भाई बहनों को संभालती हैं। खाना पकाती हैं। मां के साथ बाहर काम पर भी जाती हैं। दुर्गा भी मां के साथ छः सात घरों में झाड़ू पोंछे का काम करती है।

नए शहर में आए तो नौरती ने हमारे यहां काम करना शुरू किया। दुर्गा उसी की बेटी है। करीब सोलह-सत्रह साल की दुबली-लम्बी लड़की। शाम को हमेशा दुर्गा ही काम करने आती थी। एक दिन मैंने पूछाः–

"दुर्गा, तू सुबह क्यों नहीं मां की मदद कराती। सुबह तो काम ज़्यादा होता है।"

"सुबह मैं "इंस्टीट्यूट" जाती हूं, मेमसाब" दुर्गा ने जवाब दिया।

इंस्टीट्यूट! मेरे कान खड़े हो गए।

"कौन-सा इंस्टीट्यूट?"

"पौलीटेक्निक इंस्टीट्यूट" वह बोली।

"अच्छा!" मैं चकित रह गई।

मैंने नौरती से इस बारे में पूछा, और इस तरह दुर्गा की कहानी सामने आई। नौरती और उसका पति घनश्याम राजस्थान के बहुत पिछड़े इलाके के एक गांव में रहते थे। दुर्गा उनकी सबसे बड़ी बेटी है। आखातीज आई। घर के बड़े बूढ़ों ने सारी पोतियों का एक साथ ब्याह करने की ठानी। छः महीने की दुर्गा का ब्याह भी हो गया। जब वह दो साल की बच्ची थी तभी उसका पांच साल का पति मर गया। नौरती की आंखों के आगे अंधेरा छा गया। बेचारी दुर्गा का अब क्या होगा।

कुछ साल बाद गांव में अकाल पड़ा। खेती सूख गई। ढोर डंगर मरने लगे। लोग गांव छोड़-छोड़कर जाने लगे। नौरती और घनशयाम जयपुर चले आए। बड़े शहर में दोनों को काम मिल गया। एक दिन नौरती ने देखा चार साल की दुर्गा कोयले से जमीन पर कुछ लिख रही थी।

साभार–वर्क एण्ड इमप्रूवमेंट

"अरे, तूने यह कहां सीखा?" मां ने पूछा

"दीदी ने सिखाया" दुर्गा बोली

नौरती की बस्ती में एक छोटा सा स्कूल था। नौरती के काम पर जाने के बाद दुर्गा खेलते खेलते वहां चली जाती थी। वहीं उसने अक्षर लिखना सीख लिया था।नौरती ने दुर्गा को स्कूल में भर्ती करा दिया। दुर्गा पढ़ने में खूब तेज़ निकली। उसकी मास्टरनी भी खूब तारीफ़ करती। धीरे-धीरे दुर्गा पढ़ती चली गई।

"तो तुम लोग वापिस गांव नहीं गए" मैंने नौरती से पूछा।

"बुलावे तो बहुत आए पर दुर्गा का मुंह देख कर रुक गए।" नौरती ने बताया।

सच ही तो है। गांव जाकर दुर्गा की पढ़ाई छूट जाती। यहां दुर्गा की मास्टरनी ने नौरती और घनश्याम को समझाया।

"तुम लोग खुशकिस्मत हो जो ऐसी अकलमंद बेटी मिली है। अब इसकी पढ़ाई मत छुड़ाना।"

शहर की आबोहवा में नौरती और घनश्याम को यह बात समझ में आ गई। सोचा दुर्गा अपने पैरों पर खड़ी हो जाएगी तो ज़िन्दगी सुधर जाएगी। धीरे-धीरे दुर्गा ने अव्वल दर्जे में दसवीं पास कर ली। दुर्गा जहां-जहां काम करने जाती थी वे सब भी उसे बहुत प्यार करते थे।

एक दिन अखबार में पौलीटैकनिक इंस्टीट्यूट का इश्तिहार निकला। दसवीं पास लड़के और लड़कियों को तरह-तरह की ट्रेनिंग दी जाती है। साथ में कुछ भत्ता भी मिलता है। पिछड़ी जातियों के लिए सीटें आरक्षित भी हैं। एक मेमसाहब के कहने पर दुर्गा ने फ़ार्म भर दिया। दो साल बाद दुर्गा टेलीविजन ठीक करने वाली मिस्त्री बन जाएगी। चाहे अपनी दुकान खोले, चाहे कहीं नौकरी कर ले।

अब नौरती को दुर्गा पर बहुत गर्व है। कहती है "मेरी दुर्गा बहुत सयानी है मेमसाब। दसवीं पास छोरा होता तो अपने को लाटसाब समझता। छोरी तो मेरी खूब मदद करती है।"

"पढ़ाई लिखाई तो ठीक है, नौरती। अगर बड़ी होकर दुर्गा शादी करना चाहे तो?" मैंने धीरे से पूछा।

"तो क्या मेमसाब। उसका बाप जरूर गुस्सा करेगा। पर मैं तो उसका साथ दूंगी।"

नौरती की बात सुनकर मेरा मन खिल गया। लगा कहीं न कहीं बदलाव तो आ रहा है। □

प्याऊ-एक सफल लड़ाई

सीमा श्रीवास्तव

उस दिन दक्षिणपुरी बी-ब्लाक में काफ़ी चहल-पहल थी। प्याऊ को खुबसूरत ढंग से सजाया गया था। आज इस प्याऊ का उद्घाटन मात्र ही नहीं है। इसके पीछे औरतों का एक लम्बा संघर्ष और फ़तह की कहानी है जो आज से दो महीने पूर्व आरम्भ हुई थी।

दक्षिणपुरी बी-बलॉक मार्केट में कुछ ज़मीन पर पप्पू नाम के एक बिजली मैकेनिक ने कब्जा किया हुआ था और अवैध रूप से अपनी दुकान बना रखी थी। उसने कुछ ज़मीन जूस वाले को 2,500 रुपये माहवार पर किराए पर दे रखी थी। वहीं पर एम.सी.डी. के पानी का नल भी है। इससे वहां के करीब सौ घर पानी भरते हैं। पप्पू ने सोचा कि इस नल को तोड़कर लॉटरी का एक काउंटर बनाए। इससे उसे 10 हजार रुपये तक की आमदनी हो सकती थी। अपने स्वार्थ के लिए उसने नल तोड़ दिया। 'एकल औरत महिला समूह" पिछले 12 वर्षों से दक्षिणपुरी सुभाष कैम्प में कार्यरत है। इसने, इसका विरोध किया और उसी जगह प्याऊ बनाने का निश्चय किया। इस अभियान में युवा संघ व महिला संघ दोनों ने एकजुट होकर काम किया। इस लम्बे दौर में इन्हें कई खतरों का सामना करना पड़ा। पप्पू बनिए ने शराब पीकर गालियां बकीं। उसने हर वो हथकण्डे अपनाए जिससे उनका प्याऊ अभियान धूमिल हो जाए। उसने प्याऊ तोड़ने की धमकियां दी, लेकिन तमाम कोशिशें नाकाम हुई। शान्ति, एकल महिला समूह और युवामंच दोनों ने मिलकर, एक जुट होकर प्याऊ की नींव डाल ही दी। दो महीने की भागदौड़ में इन्होंने इस जगह का रजिस्ट्रेशन भी करवा लिया। युवा संघ ने सुझाव दिया कि इस प्याऊ पर भगवान् की फ़ोटो होनी चाहिए, तुरन्त महिला संघ से आवाज आई तब तो हर धर्म की फ़ोटो लगवानी चाहिए। इसका जवाब किसी के पास नहीं था। किसी तरह बात सुलझी कि प्याऊ पर युवा संघ और एकल औरत महिला समूह दोनों नाम दिए जाएं। सबकी राय पर यह नाम लिख दिए गए।

यह जमीन मार्किट में थी और यह सारा इलाका जिस प्रधान के अधीन आता है वह दोहरी नीति चला रहा था। उसने भी प्याऊ का विरोध किया, लेकिन युवाओं और महिलाओं की ताकत देखकर हामी भरने में ही भलाई समझी।

संघ में भी युवाओं एवं महिलाओं के बीच प्रधान को बुलवाया गया और उससे बात की गई यहां प्रधान समूह पर इल्ज़ाम लगाते हुए कहने लगा' 'आप लोग राजनीति खेलते हो। इस प्याऊ का काम तो पूरी बस्ती ने किया है, फिर समूह का नाम क्यों?" परन्तु समूह यह अच्छी तरह जानता था कि 'नाम' का तो बहाना था। वास्तविक लड़ाई महिलाओं की एकता और सफलता से उत्पन्न खीझ थी।

खैर, इतना बड़ा समूह व उसकी एकता के सामने उन्हें झुकना पड़ा और 5 जुलाई 1997 को महिलाओं द्वारा बनाए प्याऊ का उद्घाटन हुआ। करीब

200 लोग इकट्ठा हुए। गाने बजाने का माहौल था। महिलाएं खुश थीं कि उनके संघर्ष को एक पहचान मिली है।

बात सिर्फ प्याऊ की नहीं थी। सरकारी जमीन पर अवैध कब्जा करना, शराब और जुए का अड्डा खोलना- इन सबका विरोध कोई नहीं कर रहा था। युवा शक्ति के साथ महिला संघ ने यह कार्य कर दिखाया। उद्‌घाटन के दौरान औरतों की घोषणा साफ थी। जो इस प्याऊ को तुड़वाने की बात करेगा वह सफल नहीं हो सकता। उसके जमानती भी पैदा होने नहीं दिए जाएंगे। जूस की दुकान के पास शराब पीने वाले को पुलिस के हवाले किया जाएगा और उसकी दुकान हटाने का काम हम करेंगे। जो इस प्याऊ पर नहायेगा उसे 51 रुपये दण्ड देना होगा। संघ द्वारा तय सजा भुगतनी होगी। इससे लोगों में काफी हिम्मत आई। जो इस प्याऊ के विरोध में थे उनकी तमाम कोशिशें नाकाम हुईं। महिलाओं की जीत हुई। वहां लॉटरी काउन्टर नहीं खुला। प्याऊ बना जिस पर लिखा नाम महिलाओं के संघर्ष और जीत का सबूत है। □

किनारों पर उगती पहचान–एक समीक्षा

वीणा शिवपुरी

जागोरी की पुस्तकों की श्रृंखला में नई कड़ी है– 'किनारों पर उगती पहचान'। राजकमल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित व आभा भैया द्वारा सम्पादित यह किताब समाज के हाशिए पर जीने वाली एकल औरतों के जीवन का दस्तावेज है। इसमें जागोरी की कार्यवाही पर आधारित नारीवादी शोध का ब्यौरा है। तीन भागों में बंटी इस किताब के पहले भाग में औरत-औरत के फ़र्क को समझने की कोशिश की है। हमेशा एकता और बहनापे की बात करने वाले महिला आन्दोलन में जब फर्कों की बात उठाई जाती है तो वह सुबूत है हिम्मत और आत्मविश्वास का।

किताब के दूसरे भाग में छह एकल औरतों के जीवन की कहानियां हैं। ये जीवनियां जीवन की सच्चाइयों को किताबी धारणाओं से कहीं अधिक समझाती हैं। एकल औरतों की ताक़त और सीमाएं, दुख-दर्द और खुशियां, समाज द्वारा लगाए गए कांटेदार तारों का घेरा सभी कुछ समझ में आने लगता है।

तीसरे भाग में शोध प्रक्रिया की प्रणाली, सर्वे की प्रश्नावली आदि दी गई है।

एकल औरत परियोजना का अतीत वर्तमान बस्ती की ज़मीन पर है। आज वहां अनेक सशक्त एकल औरतें एक जुट होकर एक दूसरे को सहारा दे रही हैं।

इस किताब की भाषा औरतों की भाषा है। जिसमें कविता है लेकिन कड़वी सच्चाइयां कहने की ताक़त भी।

यह किताब एकल औरतों के साथ काम करने वालों के लिए, औरतों तथा उनके संगठनों के लिए तथा उन सबके लिए फ़ायदेमंद साबित होगी जो औरतों के मन की परतों में झांकना चाहते हैं, समाज की उधड़ती सीवन को परखना चाहते हैं। □

बेटी का ख़त-माँ के नाम

जुही

प्यारी मां!

सादर चरण स्पर्श,

आज मेरी शादी को पूरा एक साल हो गया है और पूरे एक साल बाद ही मैं तुम्हें ख़त लिख रही हूं। अभी तक तुमसे नाराज़ थी। तुमने विकास से मुझे शादी जो नहीं करने दी थी। याद है मां मैं उस दिन तुमसे कितनी झगड़ी थी और जिस रोज़ विकास की शादी हुई थी उस दिन तो जैसे आसमान टूट पड़ा था। धीरे-धीरे मैं अपना दुखः भूल गई थी। और फिर समीर के साथ तुमने मुझे ब्याह दिया था।

अपनी आय पर अपना नियंत्रण रखना भी हम औरतों को सीखना होगा। कमाने के साथ-साथ उसे अपनी मर्ज़ी से खर्च करना भी जरूरी है। नहीं तो औरत महज एक पैसा कमाने वाली मशीन बनकर रह जाती है। गुलामी का एक पहलू यह भी है।

मुझे याद है अपना बचपन। याद है तुम्हारी सिसकियां। याद है पिताजी। तुमने पिताजी से अपनी मर्ज़ी से शादी की थी। तुम बताती थीं। दो साल सबकुछ ठीक चला। फिर न जाने क्या हुआ। पिताजी बदल गये। तुम्हें रोज मारते-पीटते। खाना अच्छा बना हो तो भी थाली उठाकर फेंक देते। बुरा बना हो तो कहते मां ने कुछ भी नहीं सिखाया। कितनी रातें तुमने आंगन के कोने में सिसकते हुए गुज़ारी थीं। भूखी-प्यासी। मुझे बुआ भी याद है। वही तो छुप-छुपकर तुम्हें रोटी खिलाने आती थीं। हल्दी चूना लगाती थीं। मां बुआ कितनी अच्छी थी ना? फिर एक दिन तुमने पिताजी का घर छोड़ दिया। बस दो जोड़े कपड़े थैले में डाले और मुझे साथ लेकर निकल पड़ी। समझ में नहीं आया क्यों? तुम आफ़िस से शाम को जल्दी घर आ गई थीं। पिताजी मुझे अपनी गोद में चिपकाए खिला रहे थे। मैं करीब तीन साल की थी। कुछ पल तुम देखती रहीं। फिर गोदी से मुझे छीन चीखीं– तुम इस हद तक गिर जाओगे मुझे नहीं पता था और हम चले आए थे।

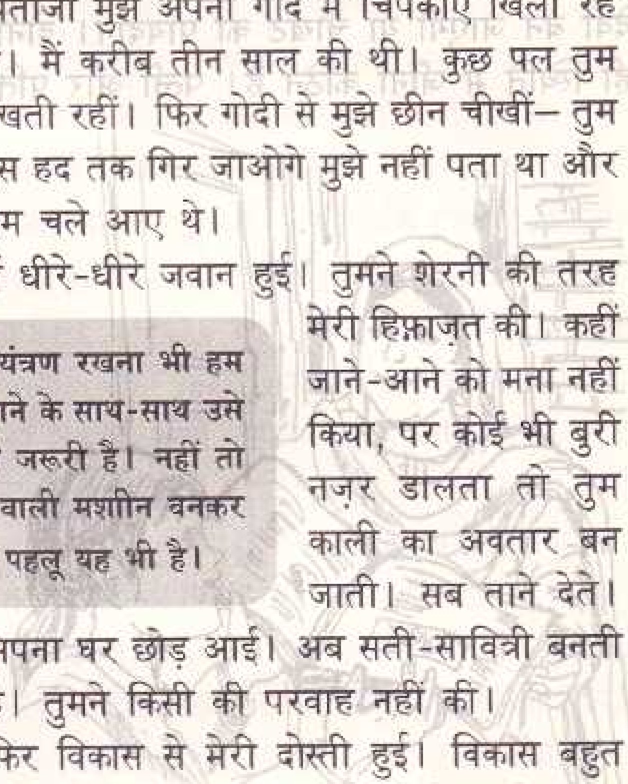

मैं धीरे-धीरे जवान हुई। तुमने शेरनी की तरह मेरी हिफ़ाज़त की। कहीं जाने-आने को मना नहीं किया, पर कोई भी बुरी नज़र डालता तो तुम काली का अवतार बन जाती। सब ताने देते। अपना घर छोड़ आई। अब सती-सावित्री बनती है। तुमने किसी की परवाह नहीं की।

फिर विकास से मेरी दोस्ती हुई। विकास बहुत अमीर था। खूबसूरत था। मैं उससे शादी करना चाहती थी। बस बेसुध सी हो गई थी मैं। जो विकास कहता मैं पहनती। जो विकास कहता वह पढ़ती। कहीं भी जाती तो उसकी इजाजत लेकर। खाती तो उसकी पसंद का। उसके मना करने पर गाना सीखना भी तो बंद कर दिया था। यहां तक कि वही सोचती जो विकास कहता। मैं पूरी तरह उसकी गुलाम हो गई। तुम कहती, तू इसके साथ कभी सुखी नहीं रहेगी। यह तेरे पिताजी जैसा है। वह भी ऐसे ही थे। उनको भी

मेरा गुलाम वाला रूप पसंद था। विकास भी ऐसा ही है। उस समय तुम्हारी यह बातें मुझे अच्छी नहीं लगती थीं।

तुम कहा करती थीं शादी उससे करना जो तुम्हें गुलाम नहीं, इंसान समझे। हमें इंसान समझा जाएगा तो हमारे गुणों और दोषों के साथ हमें अपनाया जायेगा। वरना या तो हम मंदिर की देवी बन जाएंगी या चौखट का पायदान। दोनों ही स्थिति में जीना कठिन है। पत्नी और पति एक गाड़ी के दो पहिए हैं और गाड़ी में एक कार का और एक ट्रक का पहिया लगा हो तो संतुलन बिगड़ जायेगा। सरपट गाड़ी तभी चलेगी जब दोनों पहिए बराबर होंगे। बस पति-पत्नी का मेल भी ऐसा होना चाहिए।

मैंने तुम्हारी मर्ज़ी के खिलाफ़ विकास से शादी की, पर मैं दुखीः रहने लगी। मुझे लगता था तुम स्वार्थी हो। फिर मैंने नौकरी शुरू की। अपने पैरों पर खड़ी हो गई। मुझे महसूस हुआ– आसपास के लोग मेरी इज़्ज़त करने लगे हैं। टीचर बनकर जैसे मैंने किला फ़तह कर लिया था।

मेरी कमाई में से एक भी पैसा तुम नहीं लेती थीं। कहती, अपनी आय पर अपना नियंत्रण रखना भी हम औरतों को सीखना होगा। कमाने के साथ-साथ उसे अपनी मर्ज़ी से खर्च करना भी जरूरी है। नहीं तो औरत महज एक पैसा कमाने वाली मशीन बनकर रह जाती है। गुलामी का एक पहलू यह भी है। तुम यह भी कहती, काम करना नहीं छोड़ना। इससे तुम्हारी पहचान कायम रहेगी। सिर्फ़ किसी की पत्नी व मां बनकर रहना नहीं पड़ेगा। हमारे समाज में औरत हमेशा किसी मर्द के नाम से ही जानी जाती है। थोड़ी बहुत पहचान जो भी होती है वह पुरुष की वजह से ही होती है। पर तुझे अपनी पहचान बनानी है।

समीर को तुमने ही पसन्द किया था। मेरी शादी हो गई। मुझे हमेशा लगता रहा कि समीर विकास जैसा नहीं है। हां सच मां, वह बहुत अलग है। वह मुझे इंसान समझता है। मेरे सुख-दुख में सहारा बनकर रहता है। मुझे मान और प्यार देता है। विकास और समीर का फ़र्क़ जो मुझे उस समय समझ नहीं आया था। अब समझ गई हूं।

मां, इतने दिन तक जो तुम्हें गलत समझा उसके लिए माफी चाहती हूं। मुझे राह दिखाने के लिए शुक्रिया, मां। इस ख़त के जरिए मैं अपने जैसी तमाम लड़कियों के लिए संदेश दे रही हूं। आपने जिस मज़बूती से मुझे गढ़ा है वह जीवन भर मेरा हौसला बढ़ाता रहेगा।

बहुत-बहुत प्यार के साथ
तुम्हारी बेटी

पुराने अन्याय—नई परिभाषाएं

सीमा व शांति

'आज कानूनी ढांचे में औरत की जगह हशिए पर भी नहीं है।' इस सच्चाई के होते हुए भी आज औरतों के बढ़ते कदमों को रोका नहीं जा सकता। इसका सबसे बढ़िया उदाहरण बड़ौदा की 'नारी अदालत' है। अब सवाल उठता है कि यह नारी अदालत है क्या?

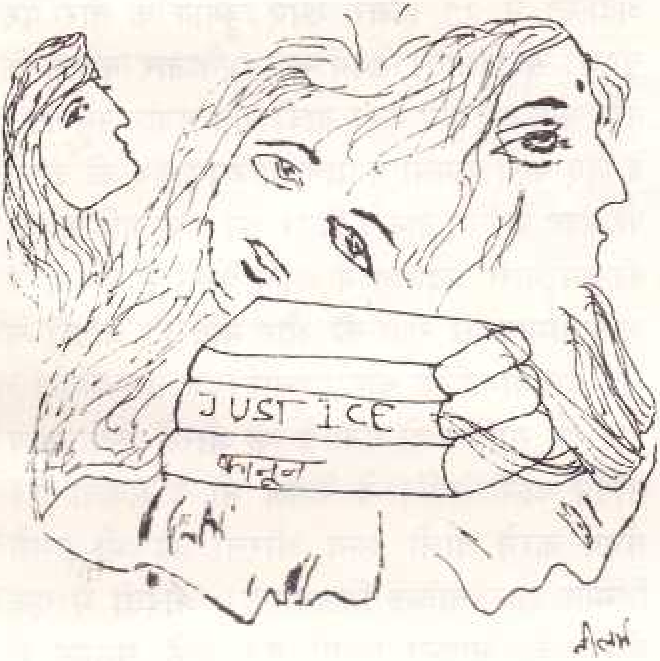

वास्तव में महिला समाख्या बड़ौदा की संघ की महिलाओं के पास गांव की बहनें अपनी-अपनी समस्या। परेशानी को लेकर आती थीं। मामला बलात्कार, छेड़छाड़ का हो या घरेलू हिंसा का हर समस्या को सब मिलकर सुनती। उससे जूझने के तरीके निकालती, परन्तु कभी किसी-किसी मामले में कोर्ट कचहरी के चक्कर भी लगाने पड़ते। यह लड़ाई दोहरी थी—एक ऐसी कानूनी व्यवस्था से जहां न्याय हमेशा अगली तरीख का इन्तज़ार करता रह जाता है, ऊपर से पुलिस के हथकण्डे। अतः इन गांव की महिलाओं ने न्याय के दूसरे विकल्प ढूंढे। मिलकर न्याय करने का फैसला किया। अपनी अदालत बनाई। इसी के तहत जागोरी और जिला इकाई ने मिलकर कानूनी साक्षरता की शुरुआत की, ताकि गांव में अदालत चालने वाली औरतें कानून की अपनी पकड़ को मज़बूत कर लें। यह ट्रेनिंग करीब ग्यारह हफ़्ते चली। इसमें केवल कानूनी जानकारियां ही नहीं थीं बल्कि अपने-अपने दैनिक अनुभवों में लड़ी गई लड़ाईयां भी बांटीं। इनमें कानून से भी भारी गहरी सोच और निर्णय की समझ होती है।

देहात की अनपढ़ मगर जानकार औरतों ने खुद एक कदम उठाया— एक औरतों की अदालत की नीवं डाली। यह नारी अदालत के नाम से प्रसिद्ध है। यहां कोई भी महिला अपनी समस्या लेकर जा सकती है। यहां बगैर झिझक वह अपनी बात कह सकती है। इस तजुर्बे से औरतें सशक्त बनी हैं। बाहर की दुनिया में घूमती और काम करती नज़र आने लगी हैं। ये अदालतें और इनमें मिलने वाला इंसाफ़ बहुत लोकप्रिय हो रहा है। अब तो ऐसे गांवों से भी लोग यहां आने लगे हैं जहां महिला समाख्या काम नहीं कर रही। सरकारी अफ़सर भी इन औरतों की योग्यता को मान गए है और अब इनकी मदद भी करते हैं। नारी अदालत की इन बहनों ने आज तक करीब 327

केस सुलझाए हैं। इससे इनकी कुशलता, सोच समझ, अनुभव और ज्ञान का पता चलता है। इनकी सजाएं भी अनोखी, औरत की पहचान व उके मान-सम्मान को लेकर चलने वाली होती हैं। इसी तरह का एक फैसला महिला छेड़छाड़ के केस में यहां की नारी अदालत ने दिया।

केस कमला का था। वह मजदूरी करके अपने परिवार का पेट पालती है। एक दिन कमला खेत से गुजर रही थी कि गांव के चौधरी के लड़के ने उस पर पीदे से वार किया। उसने कमला पर यौनिक हमला करने की कोशिश की। कमला चीखी, जोर से चिल्लाई, हाथापाई कर अपने को छुड़ाकर भागी। किसी तरह खुद को बचाकर फटेहाल वह संघ की औरतों के पास पहुंची।

संघ की औरतों ने अपनी नारी अदालत बिठाई। इस अदालत में कमला ने जब अपनी आपबीती सुनाई तो अदालत ने आपसी चर्चा के बाद कमला से पूछा कि वह क्या चाहती है। कमला कोर्ट कचहरी के झंझट से बचना चाहती थी क्योंकि उसकी मजदूरी छूट सकती थी। फिर एक मजदूर गरीब औरत अकेली कोर्ट के दरवाजे तक पहुंचे तो कैसे? अदालत से न्याय मिलना इतना आसान नहीं था। उसने नारी-अदालत पर अपना फैसला छोड़ दिया।

काफ़ी चर्चा के बाद निर्णय लिया गया कि चौधरी के बेटे का सामाजिक बहिष्कार किया जाए और साथ ही उससे 50 हज़ार रुपए दण्ड वसूल किया जाए। वह सारे गांव के सामने कमला और संघ की औरतों से माफ़ी मांगे। इस फैसले का गाव के ज़्यादातर लोगों ने साथ दिया। अगले दिन अदालत की बैठक में चौधरी और उसके लड़के ने कमला व अदालत से सारे गांव के सामने माफ़ी मांगी। उसने 25 हजार रुपए देते हुए प्रार्थना की कि वह मुश्किल से केवल इतना ही जुटा पाया है। अदालत ने कमला पर फैसला छोड़ दिया। तब कमला ने कहा ठीक है गांव में इसे भी रहना है और मुझे भी। बात पैसों की नहीं औरत के मान सम्मान की है। अगर आज इसे सजा नहीं मिली तो यह फिर ऐसा ही करेगा। मैं 25 हजार रुपए हर्जाने पर सहमत हूं।"

अदालत ने 25 हजार रुपए जुर्माने के तौर पर चौधरी से दिलाए। इनमें से 20 हजार कमला के नाम जमा कर दिए गए। बाकी पांच हज़ार उसे नकद दे दिए गए। कमला ने पांच सौ रुपए संघ की बहनों की मदद के लिए दान दे दिए। इस तरह महिला संघ की इस नारी अदालत ने अपने फैसले से कमला के आत्मसम्मान की रक्षा की और साथ ही चौधरी के अहं पर सामाजिक चोट पहुंचाई।

अब यह साबित हो गया है कि औरतें सिर्फ न्याय मांगने वाली नहीं। वे फैसले भी दे सकती हैं। संघर्ष करने वाली अन्य औरतों को भी इससे हिम्मत और ताक़त मिलती है। औरतों में एक गौरव की भावना पनपी है। उन्हें समाज में सम्मान भी मिला है। कुछ-कुछ ज्यादा उम्र की औरतों को अब गांव वाले वकील साहब बुलाने लगे हैं– जब औरतें ये बता रही थीं तो उनके चेहरे पर फैलने वाली मुस्कुराहट देखने काबिल थी। यह गौरवमयी पहचान अपनी सूझबूझ और ताकत पर बनाई हुई है– औरत के लिए न्याय की नई परिभाषाएं गढ़ती हुई। □

एड्स के ख़तरों से घिरी औरत

आभा

एक नई बीमारी, एक नई चर्चा। एड्स का नाम तो बहुत सुन रहे हैं पर उसका हम औरतों पर क्या असर पड़ता है ये जानकारी बहुत अधूरी है। और जो है वह भी नैतिक मूल्यों और पितृसत्तात्मक नज़रिए में क़ैद है, चूंकि एड्स का सवाल सीधा सैक्स व्यवहार से जुड़ा है। इसलिए औरतों के संदर्भ में इसे वेश्याओं से जोड़ा जा रहा है। आम लोगों के मानस में औरतों और ख़ासतौर पर वेश्याओं को इसे फैलाने के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जा रहा है।

सवाल यह है कि सच में यह बीमारी फैलती कैसे है। औरतों पर इसका क्या ख़ास असर पड़ता है तथा इसे फैलने से रोकने के लिए–किनकिन लोगों को किस तरह की ज़िम्मेदारी लेनी होगी।

दरअसल एड्स की शुरूआत होती है शरीर में एच.आई.वी. वायरस (विषाणु) के प्रवेश करने से। यह स्थिति एच.आई.बी. पौजिटिव कहलाती है। यह वायरस कई सालों तक शरीर में चुपचाप छिपा रह कर कभी भी एड्स के रूप में प्रकट हो सकता है। यह वायरस खून, वीर्य, योनि प्रवाह, माहवारी का खून और स्तन के दूध के ज़रिए एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक फैल सकता है। जो व्यक्ति एच.आई.वी. विषाणु युक्त है। उसका खून या वीर्य यदि औरत के रक्त प्रवाह से मिल जाए तो वह इस रोग से ग्रस्त हो सकती है। मतलब यह कि ये विषाणु असुरक्षित सैक्स, दूषित खून व सुई से फैल सकता है।

औरतों के लिए ज्यादा ख़तरा खड़ा करने वाले तरीके हैं:

- योनि या गुदा के रास्ते बगैर निरोध के संभोग
- माहवारी के दौरान बगैर निरोध के संभोग
- कटे या जख्मी हाथ को योनि में डालना।
- दूषित सुई का अपने शरीर पर इस्तेमाल
- शरीर में दूषित खून चढ़ाना

औरतों पर एड्स के असर को जानने के लिए पहले औरत के स्वास्थ्य का दर्जा, परिवार और समाज में उसकी अनेक भूमिकाएं, उसके अपने शरीर और जीवन पर नियंत्रण की कमी, उसके लिए सबसे कम साधनों की तजबीज आदि को समझना जरूरी है, क्योंकि एड्स के संदर्भ में ये सभी चीजें औरतों को खास तरीके से प्रभावित करती हैं। ये पितृसत्तात्मक नज़रिया उसके खतरों को कई गुणा बढ़ा देता है। औरत चाहे पत्नी हो या वेश्या, चाहे वह स्वास्थ्य कार्यकर्ता हो या बच्चे जनने वाली मां, एकल औरत हो या एक मर्द की दो पत्नियों में से एक, सबको एड्स का खतरा है। औरत तब तक एड्स के खतरों से घिरी रहेगी जब तक शारीरिक संबंधों

के बारे में सारे निर्णय उसके हाथ में नहीं है और जब तक उसका साथी उसके निर्णयों की उपेक्षा करता है।

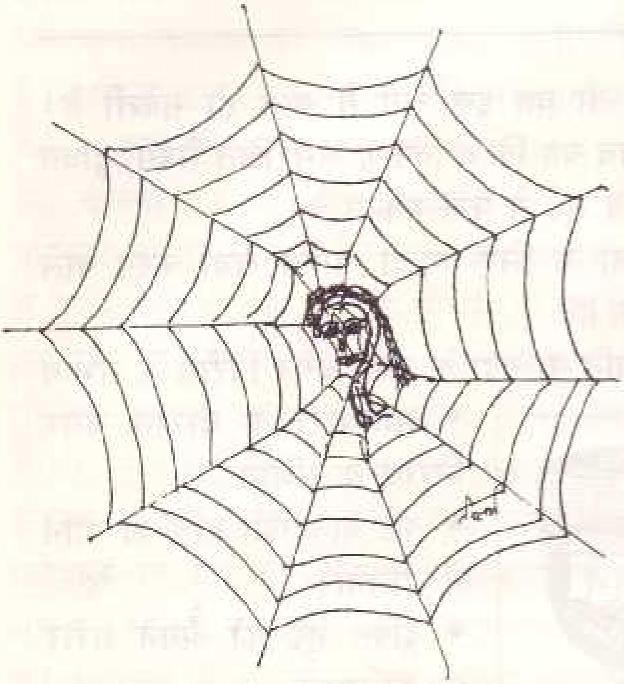

एड्स से बचाव के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है 'सुरक्षित सैक्स', परंतु ज्यादातर औरतों के लिए सैक्स एक जबरदस्ती, शादी के बाहर दूसरे मर्दों की ज़बरदस्ती। औरत के लिए 'हां' और 'ना' कहना दोनों ही ख़तरे से ख़ाली नहीं है। पत्नी के नाते वह असुरक्षित सैक्स से ना करती है तो हिंसा का भय और वेश्या के नाते इन्कार का मतलब है भूखे मरने का डर।

निरोध का इस्तेमाल सिर्फ मर्द ही कर सकता है चाहे, वह पत्नी के साथ सोए या किसी और औरत के साथ। इसलिए हर रिश्ते में सुरक्षित सैक्स अपनाने की सबसे ज्यादा जिम्मेदारी मर्द की ही बनती है।

मर्द-औरत के सभी रिश्तों में 'पावर' मर्द के हाथ में है। जब तक औरत मज़बूत और ताक़तवर नहीं होती तब तक वह तरह-तरह के खतरों से घिरी रहेगी। औरत बच्चा नहीं चाहती फिर भी मर्द निरोध का इस्तेमाल नहीं करता तो औरत के स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए वह सुरक्षित सैक्स अपनाएगा यह मानना मुश्किल लगता है, परन्तु आज पुरुष की भलाई भी इसी में है कि वह हर जगह, हर शारीरिक संबंध में निरोध का इस्तेमाल करे और अपनी ख़ास ज़िम्मेदारी को समझे।

एड्स फैलने का दूसरा कारण है दूषित खून। जचकी और सामान्य रूप से गिरे हुए स्वास्थ्य के कारण औरतें खून लेने के लिए ज्यादा मजबूर होती हैं। दूषित खून और दूषित सुई के ज़रिए औरतों के लिए एड्स का ख़तरा बहुत अधिक है। स्वास्थ्य व्यवस्था को औरत के स्वास्थ्य के प्रति सजग और संवेदनशील बनाना चाहिए। उसकी जिम्मेदारियों ओर परेशानियों को ध्यान में रखकर ख़ास साधनों को मुहैया कराना बहुत जरूरी है। □

उसने चाहा एक सहभोगी
कुछ गलत नहीं था,
उसने कहा 'निरोध'...।
वह चौंका
नखरा किया
गुस्सा किया...
उसे सुख नहीं मिलता।
वह देता रहा
प्यार का वास्ता।
उसे दुख न हो, इसलिए
वह चुप रही
होने दिया-सब
और...
उसे एड्स हो गया।

(एक विज्ञापन से अनूदित)

तारामणि : एक विकलांग युवती की प्रेरणा कथा

बालमुकुन्द ओझा

यदि रुचि, उत्साह और दृढ़ इच्छाशक्ति हो तो विकलांगता अभिशाप न रहकर सामाजिक कल्याण का वाहक बन सकती है। झुंझुनूं जिले की उदयपुवाटी पंचायत समिति के ग्राम रवींवासर की 20 वर्षीया तारामणि धींवा इसी बात का प्रमाणित करती है।

वह बनारसी राम धींवा की बेटी है। वह जन्म से विकलांग है। जिले में चल रहे साक्षरता अभियान से प्रेरित होकर, महिला समाज में साक्षरता का अलख जगाने के लिए, वह अपने घर में ही साक्षरता केंद्र चला रही है। वह इन्हें केंद्र से जोड़ने, इनमें रुचि और ललक पैदा करने तथा इनके उत्साह को बनाए रखने का सारा दायित्व निभाती है। पैरों का काम हाथों से लने वाली तारामणि धींवा आठवीं तक पढ़ती है। उसने साक्षरता केंद्र की शुरुआत की गांव की एक महिला से। एक से दो और दो से चार होकर अब तेरह महिलाएं उसके केंद्र में शिक्षा ग्रहण कर रही हैं। तारामणि घिसट-घिसट कर गांव की झाड़झंखाड़ और कांटे, पत्थरों वाली गलियों से गुजरती हुई महिलाओं से दुख दर्द पूछती है। वह इनमें साक्षरता की जोत जलाए रखने का प्रयास करती है।

पठानकोट में सीमा प्रहरी के रूप में सेवारत मानसिंह को जब अपनी पत्नी के हाथ से लिखा पत्र मिला तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ कि ऐसा हो सकता है। जब वह अपने गांव लौटकर आया तो उसकी पत्नी श्रीमती सुरेश ने बताया कि उसे पढ़ना लिखना सिखाने का सारा श्रेय तारामणि को है। इससे मानसिंह को बड़ी प्रसन्नता हुई। वह तारामणि को धन्यवाद देने उसके घर पहुंचा। आज सुरेश जैसी अनेक बहुएं बाहर रहने वाले अपने पतियों को पत्र लिखकर अपनी भावना का इजहार कर सकती हैं।

गांव की नवसाक्षर महिलाएं तारामणि से बहुत प्रसन्न हैं। वे दोपहर के आराम के क्षणों का सदुपयोग तारामणि से कुछ सीखने में करती हैं। अब वे पुस्तक पढ़ लेती हैं, घर का हिसाब कर लेती हैं।और अपने प्रवासी पतियों को पत्र लिख लेती हैं। □

(साभार-साक्षरता मिशन)

हमारा सपना . . .
हमारी बेटियाँ
सपने देख सकें -
और वो सपने
जी सकें !!

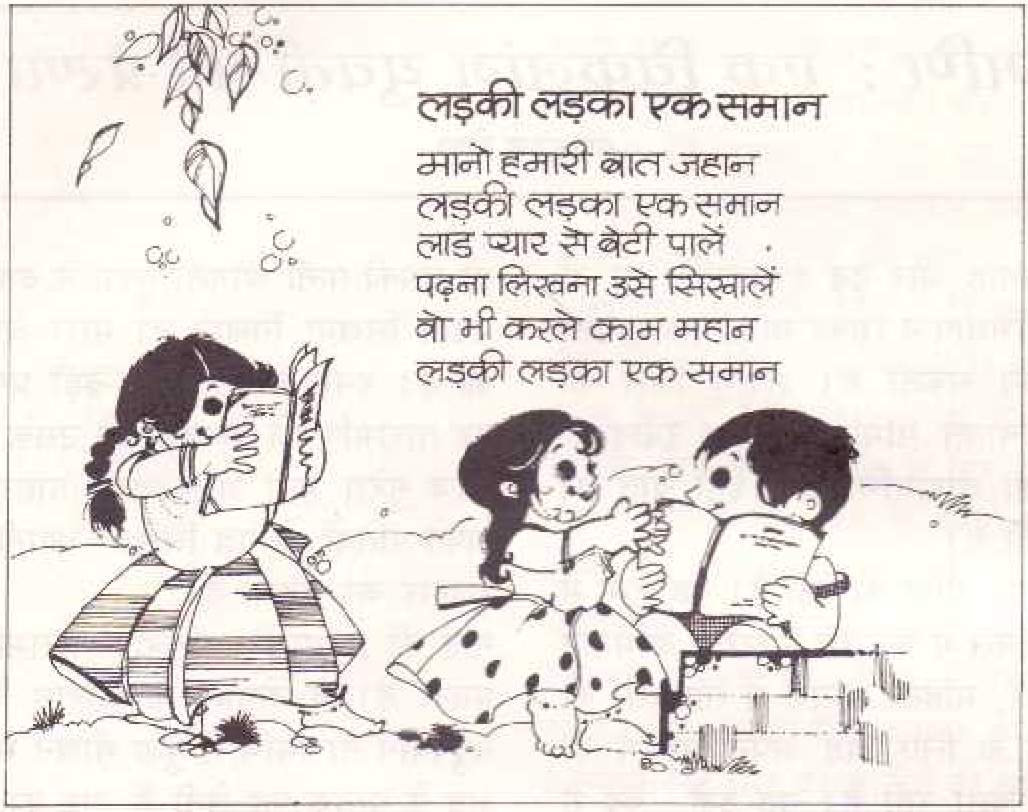

लड़की लड़का एक समान

मानो हमारी बात जहान
लड़की लड़का एक समान
लाड प्यार से बेटी पालें
पढ़ना लिखना उसे सिखालें
वो भी करले काम महान
लड़की लड़का एक समान

चिड़िया और राजा

एक लोक कथा

एक चिड़िया को कहीं से एक मोती मिल गया। चिड़िया ने उसे नथ में पिरोकर नाक में पहन लिया। यह मोती की नथ पहनकर वह राजा के महल पर जा बैठी और गाने लगी—मैं राजा से बड़ी, मेरी नाक में मोती।

यह सुनकर राजा को गुस्सा आ गया। उसने अपने आदमियों से कहा कि चिड़िया का मोती छीन लाओ, तो आदमियों ने जाकर झट से चिड़िया से मोती छीन लिया। अब चिड़िया पहले वाला गाना छोड़कर दूसरा गाना गाने लगी—राजा है भिखारी, मेरा मोती छीन लिया। यह गीत सुनकर राजा बड़ा शरमाया। उसने चिड़िया को उसका मोती लौटा दिया। मोती मिलने पर चिड़िया ने और भी नया गीत शुरू किया—"राजा तो डर गया, मेरा मोती दे दिया।" राजा यह गीत सुनकर गुस्से में लाल हो गया। उसने चिल्लाकर कहा—पकड़ लाओ इस बदमाश चिड़िया को। आदमी लोग चिड़िया को पकड़ने के लिए दौड़े। मगर चिड़िया फुर्र से उड़ गई। राजा हाथ मलता रह गया।

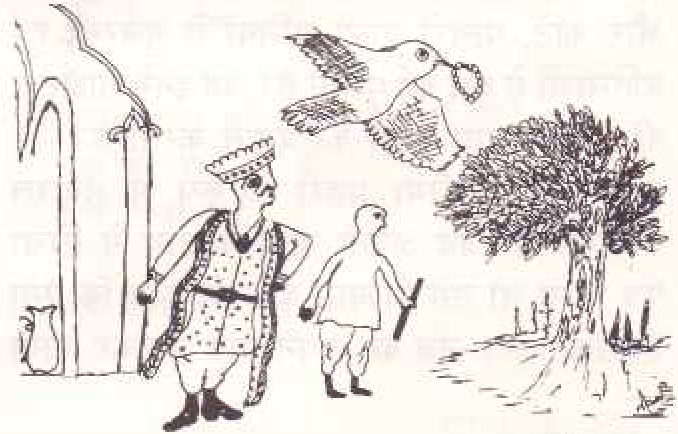

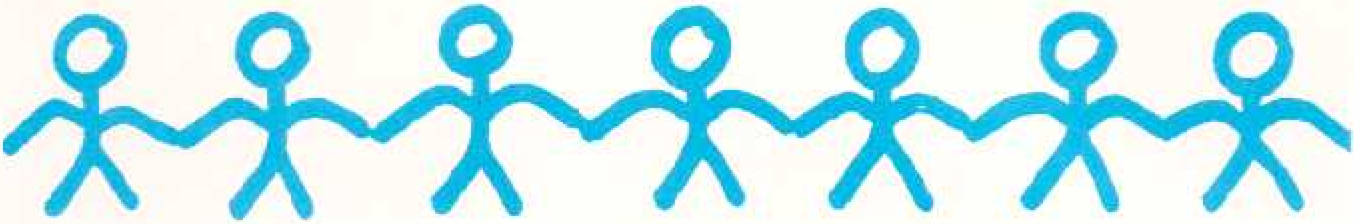

आओ अपना नाम लिखें

रूको ठहरो और सुनो
हमारी शक्ति की आवाज
हृदय की मौन पुकार
हम सक्षम हैं, सक्षम हैं, समक्ष हैं।
कोटि-कोटि हाथों की ताकत में
जोड़ दो
अपनी ताक़त
आने दो ज्वार बदलाव का
बढ़ती चलो आगे
नये वक्त
नई जगह
अपने ही बनाए नए युग
की ओर।

(तोड़ो बंधन) 'जागोरी'

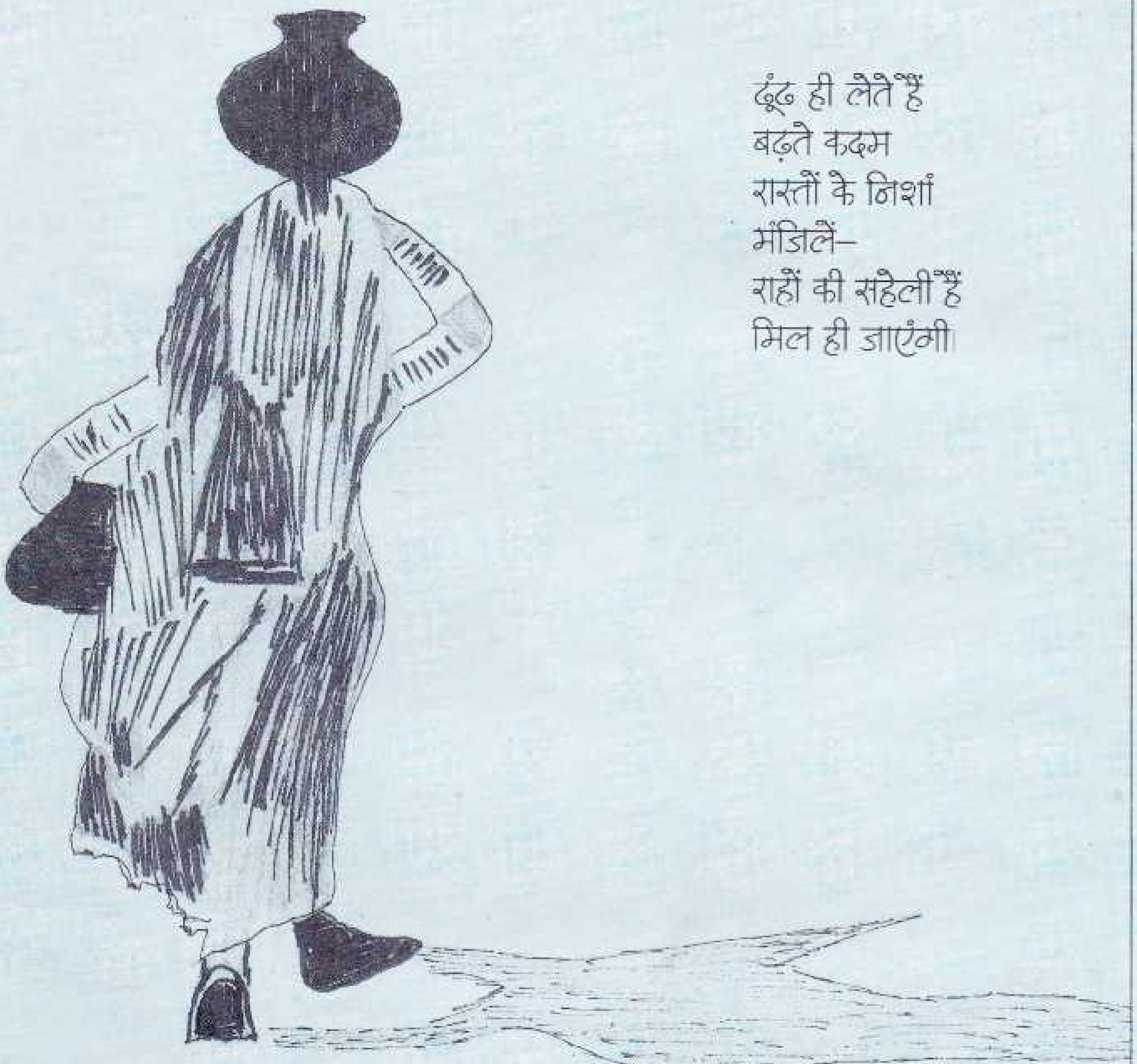

ढूंढ ही लेते हैं
बढ़ते कदम
रास्तों के निशां
मंजिलें–
राहों की सहेली हैं
मिल ही जाएंगी।